आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-018/2006-08
वर्ष : 65 ★ अंक : 4 ★ मूल्य : 10 रु.
15 अप्रेल, 2008 ★ चैत्र सं. 2065

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

नमस्कार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

मंगल-मूल, धर्म की जननी,
शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी,
फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ॥

पीयें धोवन पानी, बोलें मीठी वाणी
यही कहे जिनवाणी।

जहाँ विश्वास ही परम्परा है

रतनलाल सी. बाफना ज्वेलर्स

सोना • चांदी **औरंगाबाद** | **जलगाँव** हिरे • मोती

आकाशवाणी चौक, | सुभाष चौक,

☎ ०२४०-२२४४५२०,२२ | ☎ ०२५७-२२२५९०३,३९०३

Malhar - 08

औरंगाबाद शोरुम शनिवार छुट्टी। | जहाँ विश्वास ही परंपरा है। | जलगाँव शोरुम रविवार छुट्टी।

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन नं. 2636763

卐 संस्थापक

श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक

प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नम्बर 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003 (राज.),
फोन नं. 0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 सम्पादक

प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर- 342005, फोन नं. 0291-2730081
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 सह-सम्पादक

नौरतन मेहता, जोधपुर

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त

रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.RJ/JPC/M-018/2006-08

卐 सदस्यता

स्तम्भ सदस्यता-रू.11000/-संरक्षक सदस्यता-रू.5000/
वार्षिक सदस्यता- रू. 50/- त्रिवर्षीय सदस्यता- रू.120/-
आजीवन सदस्यता देश में - रू. 500/-
विदेश में- रू. 5000/-
इस अंक का मूल्य रू. 10/-

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

खेत्तं वत्थुं हिरण्णं च,
पसवो दासपोरुसं।
चत्तारि कामखंधाणि,
तत्थ से उववज्जए।।

- उत्तराध्ययन सूत्र ३.१७

क्षेत्र वास्तु हिरण्य स्वर्ण,
पशु दास अंगरक्षक होते।
ये चार जहाँ हो काम-स्कन्ध,
उस कुल में वे पैदा होते।।

अप्रेल २००८
वीर निर्वाण संवत् २५३४
चैत्र २०६५

वर्ष ६५ अंक ४

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिण्टिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन: 2562929

ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर प्रकाशक के उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय -	पापों की परिधि	-डॉ. धर्मचन्द जैन	५
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-संकलित	९
	विचार-वारिधि	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	१०
प्रवचन-	अक्षयतृतीया : तप एवं दान का अक्षय पर्व	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.	११
	फाल्गुनी चौमासी : आत्मशुद्धि का पर्व	-मधुरव्याख्यानी श्री गौतम मुनि जी म.सा.	१४
शोधालेख-	विक्रमादित्य की ऐतिहासिकता	-डॉ. सागरमल जैन	१९
	श्रमणाचार : स्वरूप और चिन्तन	-उपाध्याय श्री रमेशमुनिजी	२६
	जीवन-मृत्यु का आधार : आयुष्य कर्म (४)	-श्री गौतमचन्द जैन	३९
अंग्रेजी स्तम्भ-	Knowledge in Jaina Philosophy	-*Dr. Dharm chand Jain*	३२
तत्त्व-चर्चा-	उपांगों में पुण्य तत्त्व (२)	- सुश्री नेहा चोरडिया	४६
	उपासकदशांग सूत्र से पायें तात्त्विक बोध (९)	- संकलित	५५
युवा-स्तम्भ-	अनेकान्तदृष्टि : बदले अपनी सृष्टि	-श्री पदमचन्द गाँधी	५३
नारी-स्तम्भ-	मुमुक्षु बहन को पत्र..	- रुचि जैन	६५
धारावाहिक-	जम्बूकुमार (४७)	-जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.	६८
उपन्यास-	भाई-बहन (६)	-उपाध्याय श्री केवलमुनिजी म.सा.	७१
बाल-स्तम्भ-	मिटा सर्प का दर्प	-श्री राजेश जैन 'देवकर'	७५
कविता/गीत-	धर्म का महत्त्व	-श्री अरिहन्त जैन	३१
	ओ महावीर को मानने वाले	-श्री चन्द्रेश भण्डारी	३७
	जनमे वीर, रतन हैं बरसे	-डॉ. महेन्द्र सागर प्रचण्डिया	४५
	धोवन पानी : कुछ नारे	-डॉ. दिलीप धींग	६४
विचार-	प्रमोद वाक्	-श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.	१३
पाठक-पत्र-	जिनवाणी पर अभिमत : धोवन पानी वापरें		५७
साहित्य समीक्षा -	नूतन-साहित्य	-डॉ. धर्मचन्द जैन	८४
प्रतियोगिता-	आओ स्वाध्याय करें त्रैमासिक प्रतियोगिता (१७)		८१
समाचार-विविधा-	पक्खी पत्र		५८
	दीक्षा आमन्त्रण-पत्रिका		५९
	समाचार-संकलन		८५
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार		१०७

सम्पादकीय

पापों की परिधि

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

क्या पाप है और क्या पुण्य? यह प्रश्न मनुष्य को सदैव उलझन में डालता रहता है। पाप एवं पुण्य के सम्बन्ध में कुछ सरल बातें ये हो सकती हैं कि पाप पतन का कारण होने से त्याज्य होता है तथा पुण्य मानव के विकास में सहायक होने से उपादेय होता है। पुण्य जहाँ अभ्युदय का हेतु है एवं निःश्रेयस का भी निमित्त है वहाँ पाप इहलोक एवं परलोक दोनों को विकृत बनाता है। भावों की शुभता से पुण्य एवं भावों की अशुभता से पाप का निर्धारण होता है, किन्तु जब भावों की शुभता होती है तो बाह्य में भी हमारे द्वारा प्राणिजगत् का अहित नहीं किया जाता तथा जब भावों की अशुभता होती है तो न स्वहित में कार्य हो पाता है और न परहित में।

जैनधर्म में १८ पाप कहे गए हैं- १. प्राणातिपात (हिंसा) २. मृषावाद (असत्य भाषण) ३. अदत्तादान (चौर्य) ४. मैथुन ५. परिग्रह ६. क्रोध ७. मान ८. माया ९. लोभ १०. राग ११. द्वेष १२. कलह १३. अभ्याख्यान (दोषारोपण) १४. पैशुन्य (चुगली) १५. परपरिवाद (निन्दा) १६. रति-अरति १७. माया मृषावाद (मायापूर्वक असत्य कथन) १८. मिथ्यादर्शन शल्य।

हम इन १८ पापों का त्याग कर दें तो जीवन कैसा होगा, कल्पना की जा सकती है। एकदम पावन, निर्मल एवं सबका प्रणम्य, किन्तु हम इन १८ पापों में से कोई न कोई पाप हर क्षण करते ही रहते हैं। कहते हैं कि साधु इन १८ पापों में अधिकांश से रहित होता है तथा शेष से रहित होने की साधना करता है तथा श्रावक भी सामायिक में इनका त्याग करता है। त्याग कितना होता है, यह तो कहना कठिन है, किन्तु वह त्याग की साधना में सन्नद्ध अवश्य होता है। जो इन पापों का त्याग करता है वह भीतर से स्वयं को निर्मल अवश्य करता है। वह पापों के भार से रहित होने से स्वयं को हल्का अनुभव करता है। इन पापों का त्याग स्वयं को तो सुख एवं शान्ति का अनुभव कराता ही है, परिवार, समाज एवं राष्ट्र में भी सौहार्द, आत्मीयता एवं शान्ति का संचार करता है। यह जान लेना चाहिए कि पापों का सम्बन्ध मात्र व्यक्ति के निजी जीवन से नहीं है, उनका सम्बन्ध मानव समाज एवं प्राणिजगत् से भी किसी न किसी रूप में बना रहता है। इसलिए ये सभी १८ पाप आचरणकर्ता को तो भ्रष्ट करते ही हैं, समाज को भी दूषित करते हैं।

पाप मन, वचन एवं काया तीन स्तरों पर हो सकते हैं। पाप की प्रवृत्ति व्यक्ति स्वयं कर सकता है, दूसरों से कहकर करा सकता है तथा करने वाले का अनुमोदन कर सकता है। जैनधर्म में इन सभी स्तरों पर पाप को त्याज्य कहा गया है। जो जितना अधिक पाप छोड़ेगा वह उतना अधिक आत्म-विकास करने में समर्थ हो सकेगा। मनुष्य के भीतर में पाप करने की भावना जब तक विद्यमान है एवं उसकी मान्यताएँ मिथ्या हैं तब तक वह पापकारी प्रवृत्तियों में संलग्न रहता ही है। नवीन परिस्थितियों में वह पाप करने के नये तरीके ढूँढ लेता है, इसीलिए वैज्ञानिक युग में जब इण्टरनेट आया तो उसमें भी आपराधिक प्रवृत्तियाँ प्रारम्भ हो गई।

'प्राणातिपात' आदि के रूप में पापों का वर्गीकरण प्राचीन है। अभी नये-नये पाप प्रकट हो रहे हैं, यथा- १. साइबर अपराध (Cyber Crime)- यह कम्प्यूटर पर इण्टरनेट के माध्यम से होने वाला अपराध है, जो अभी धड़ल्ले से लोगों को ठगने में संलग्न है। इसके अन्तर्गत तथ्य को चुराया जाना, उन्हें परिवर्तित कर देना, वायरस पहुँचा देना आदि तो शामिल हैं ही, लॉटरी के प्रलोभन द्वारा लोगों को ठगने का भी एक बड़ा उपक्रम चल रहा है। इसी से जुड़ा हुआ एक अपराध सॉफ्टवेयर की प्रतिलिपि चुराकर बेचने से सम्बद्ध है। कम्प्यूटर एवं नेटवर्क से सम्बन्धित सभी अपराध हम साइबर अपराध के अन्तर्गत ले सकते हैं, जिनमें लड़कियों के फोटो का दुरुपयोग भी शामिल है। २. व्यापार में बनावटी तेजी एवं मन्दी उत्पन्न करना एवं उसके लिए सहयोगी स्थितियाँ उत्पन्न करना। ३. अपहरण की घटनाएँ। ४. आतंकवाद आदि।

अभी हाल ही में रोम के कैथोलिक चर्च के पोप ने वेटिकन समाचार पत्र में ९ मार्च २००८ को दिए साक्षात्कार में नये सात पापों को ईसाई धर्म में जोड़ने का उल्लेख किया है, जिसकी चर्चा 'अमेरिकन कैथोलिक वीकली' (१० मार्च २००८) एवं 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' (१२ मार्च २००८) में भी की गई है। वे नये सात पाप जो आधुनिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य को दृष्टिगत रखकर जोड़े गए हैं, इस प्रकार हैं-

१. पर्यावरण प्रदूषण (Environmental Pollution)
२. आनुवंशिकी छेड़छाड़ (Genetic Manipulation)
३. धन-सम्पदा का अभद्र प्रदर्शन (Obscene Wealth)
४. निर्धनता उत्पन्न करना (Infliction of Poverty)
५. नशीले पदार्थों का व्यापार (Drug Trafficking)

६. नैतिक रूप से विवादास्पद प्रयोग (Morally Debatable Experiment)
७. मानव के प्राकृतिक मौलिक अधिकारों का हनन (Violation of the Fundamental Rights of Human Nature)

ईसाई धर्म में पहले से सात पाप प्रचलित हैं- १. काम (Lust) २. क्रोध (Anger) ३. आलस्य/अकर्मण्यता (Sloth) ४. मान (Pride) ५. लोभ (Avarice) ६. पेटुपन (Gluttony) ७. ईर्ष्या (Envy)। इन नये एवं पुराने सात-सात पापों में हिंसा, मृषावाद , चौर्य एवं परिग्रह को पाप में सम्मिलित नहीं किया गया, इसीलिए अभी भी जागरूक पोप को पापों की सूची में समय-समय पर संशोधन/अभिवर्द्धन करने की आवश्यकता रहेगी । उसी क्रम में नये सात पापों को जो कि आधुनिक सामाजिक जीवन से जुड़े हैं एवं वे समाज के लिए घातक हैं, उनका समावेश किया गया है। इससे कैथोलिक ईसाई धर्म अपने को आधुनिक विश्व के लिए प्रासंगिक बनाने हेतु प्रयत्नशील दिखाई देता है तथा वह मानव-समाज की रक्षा की दृष्टि को भी साथ में लेकर चल रहा है। यह एक प्रशंसनीय कदम है।

पोप ने जिन सात पापों को 'सामाजिक पाप'(Social sins) के रूप में निरूपित किया है, वह विश्व के लिए एक बड़ी घटना है। पर्यावरण-प्रदूषण को पाप की श्रेणी में डालकर पोप ने इसे व्यक्ति की धार्मिक भावना के साथ भी जोड़ दिया है। इससे विश्व-स्तर पर पर्यावरण प्रदूषण को रोकना अधिक सरल हो सकेगा। द्वितीय नया पाप ईसाई वैज्ञानिकों द्वारा किए जा रहे आनुवंशकीय छेड़छाड़ पर रोक लगाने का संकेत करता है। आनुवंशकीय छेड़छाड़ से अभिप्राय है मानव के जीन (Gene) में परिवर्तन।

धन-सम्पदा के अभद्र प्रदर्शन को पाप में सम्मिलित करके पूँजीवाद की बढ़ती विकृति पर रोक लगाने की पेशकश की गई है तथा दूसरी ओर गरीबी को जन्म देने एवं बढ़ाने वाली प्रवृत्तियों को भी पाप की श्रेणी में लिया गया है। नशीले पदार्थों के व्यापार को पाप की श्रेणी में डालकर विश्व-समाज को नशामुक्त बनने की प्रेरणा की गई है। विज्ञान के विकास के साथ ऐसे अनेक प्रसंग उपस्थित होते हैं जो नैतिक दृष्टि से विवादास्पद होते हैं, क्लोनिंग करना भी इसी प्रकार का प्रयोग है जो पाप की श्रेणी में आ गया है। मानव क्लोनिंग एक सामाजिक अव्यवस्था को जन्म दे सकता है, यह प्रकृति के साथ खिलवाड़ है, अतः पोप ने भी इस पर रोक लगाने हेतु इसे 'पाप' की श्रेणी में लिया है।

पोप ने जो सातवाँ पाप गिनाया है वह मानव के प्राकृतिक मौलिक अधिकारों के हनन से सम्बद्ध है। मानव के प्राकृतिक मौलिक अधिकारों की रक्षा आवश्यक है, किन्तु साथ में विवेकपूर्वक संयम भी अनिवार्य है। अधिकारों के नाम पर यदि असंयम होता है तो उसे समीचीन नहीं कहा जा सकता।

जैनदर्शन में १८ पापों का जो निरूपण किया गया है, उसमें प्राचीन एवं नूतन सभी पापों का समावेश हो जाता है, क्योंकि कितने भी नये पाप क्यों न हों वे मानवीय भावनाओं से जुड़े हुए हैं। उनका स्वयं व्यक्ति पर भी प्रभाव पड़ता है तो दूसरे भी उससे प्रभावित होते हैं।

अधिकांश पाप हिंसा एवं परिग्रहमूलक होते हैं, अतः जैनदर्शन में हिंसा एवं परिग्रह पर नियन्त्रण करने एवं उन्हें त्यागने का उपदेश है, क्योंकि जब तक व्यक्ति हिंसा एवं परिग्रह में जीवन समझता है तब तक वह हित की वाणी को भी समझने के लिए तत्पर नहीं होता है। पर्यावरण प्रदूषण के कारण आज मानवजाति संत्रस्त है तथा उससे भूमण्डल के उष्ण होने (Global Warming) की समस्या उत्पन्न हो गई है। बैंकाक में इस समस्या पर चिन्ता प्रकट करने एवं समाधान निकालने के लिए अभी एक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित है। जैनदर्शन पर्यावरण के प्रत्येक घटक का संरक्षण सुनिश्चित करता है, क्योंकि उसमें गृहस्थ के लिए भी निष्प्रयोजन हिंसा का निषेध है। अनर्थदण्ड से विरमण का प्रतिपादन भी व्यक्ति को व्यर्थ के हिंसाकारी कार्यों से रोकता है। हिंसा-त्याग के कारण माँसाहार-त्याग का विधान भी जैनदर्शन में हो गया है। आचार्यों ने सप्तकुव्यसन-त्याग का जो प्रतिपादन किया है उसमें माँसाहार-निषेध एवं नशा-त्याग समाहित है।

कैथोलिक चर्च जिस प्रकार पापों की नई सूची दे रहा है, इस प्रकार तो सदैव नये-नये पापों की गणना करनी पड़ेगी, क्योंकि अभी भी साइबर क्राइम जैसे पाप का समावेश नई सूची में नहीं है। जैन धर्म में पापों का निरूपण बड़े सूक्ष्म स्तर पर हुआ है, अतः नये-नये पापों के आने पर भी वे पूर्व वर्गीकरण में ही समायोजित हो जायेंगे। इसीलिए जैनदर्शन में साइबर क्राइम का समावेश हिंसा, झूठ, चोरी, अभ्याख्यान आदि पापों में हो जाता है।

यह सत्य है कि जैनधर्म में पापों के त्याग की प्रेरणा मुख्यतः आत्मिक शुद्धि हेतु की गई है, तथापि इन पापों के त्याग से सामाजिक व्यवहार में भी कोमलता एवं सौहार्द का समावेश होता है। अतः पाप आत्मोन्नति के लिए भी त्याज्य हैं तथा समाज एवं विश्व के हित में भी त्याज्य हैं।

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

चत्तारि घुणा पण्णत्ता, तं जहा- तयक्खाए, छल्लिक्खाए, कट्ठक्खाए, सारक्खाए।

एवमेव चत्तारि भिक्खागा पण्णत्ता, तं जहा- तयक्खायसमाणे, जाव (छल्लिक्खायसमाणे कट्ठक्खायसमाणे) सारक्खायसमाणे।

१. तयक्खायसमाणस्स णं भिक्खागस्स सारक्खायसमाणे तवे पण्णत्ते।

२. सारक्खायसमाणस्स णं भिक्खागस्स तयक्खायसमाणे तवे पण्णत्ते।

३. छल्लिक्खायसमाणस्स णं भिक्खागस्स कट्ठक्खायसमाणे तवे पण्णत्ते।

४. कट्ठक्खायसमाणस्स णं भिक्खागस्स छल्लिक्खायसमाणे तवे पण्णत्ते।

-स्थानांग सूत्र, चतुर्थ स्थान, प्रथम उद्देशक, सूत्र ५६

घुण (काष्ठ-भक्षक कीड़े) चार प्रकार के कहे गये हैं। जैसे-

१. त्वक् खाद- वृक्ष की ऊपरी छाल को खाने वाला।

२. छल्ली खाद- छाल के भीतरी भाग को खाने वाला।

३. काष्ठ खाद- काष्ठ को खाने वाला।

४. सार-खाद- काष्ठ के मध्यवर्ती सार को खाने वाला।

इसी प्रकार भिक्षाक (भिक्षा-भोजी साधु) चार प्रकार के कहे गये हैं। जैसे-

१. त्वक् खाद समान- नीरस, रूक्ष, अन्त-प्रान्त आहारभोजी साधु।

२. छल्ली खाद समान- अलेप आहारभोजी साधु।

३. काष्ठ खाद समान- दूध, दही, घृतादि से रहित (विगयरहित) आहारभोजी साधु।

४. सार खाद समान- दूध, दही, घृतादि से परिपूर्ण आहारभोजी साधु।

१. यहाँ त्वक् खाद समान भिक्षाक का तप सार-खाद-घुण के समान कहा गया है।

२. सार खाद समान भिक्षाक का तप त्वक्-खाद-घुण के समान कहा गया है।

३. छल्ली खाद समान भिक्षाक का तप काष्ठ-खाद-घुण के समान कहा गया है।

४. काष्ठ खाद समान भिक्षाक का तप छल्ली-खाद-घुण के समान कहा गया है।

अमृत-चिन्तन

विचार-वारिधि

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

- त्यागी वह है जो उस चीज को छोड़ता है जो उसको प्यारी है। मन के सच्चे भाव से रमणीक वस्तु को स्वयं बिना परवशता के छोड़ना त्याग है।
- जितना ज्यादा त्याग करोगे उतनी ज्यादा ताकत आयेगी।
- जो चीज अपने को पंसद है, स्वाधीन है, उपलब्ध है- उसका इच्छापूर्वक त्याग करो, इसका नाम त्याग है। ऐसा त्याग करने वाले संसार में पूजनीय, आदरणीय बनते हैं, उनका वन्दन होता है।
- अन्न छोड़ना ही तप नहीं है। अन्न छोड़ाने की तरह वस्त्र कम करना, इच्छा कम करना, संग्रहवृत्ति कम करना, कषायों को कम करना, यह भी तप है।
- जब तक आदमी इच्छा की बेल को काट नहीं देता है तब तक सुखी होने वाला नहीं है।
- मन का स्वभाव नीचे गिरने का है, इसलिये इसको ऊपर उठाने के लिये ज्ञान का बल लगाना पड़ेगा।
- संसार के पदार्थ तभी खींचते हैं जब उनके प्रति तुम्हारा राग होता है, ममता होती है।
- दुःख मिटाना चाहते हो तो जिन चीजों से दुःख होता है, उनके प्रति आसक्ति को ढीली कर दो। यह समझो कि यह चीज़ मेरी नहीं है। जो चीज आपकी होगी वह आपसे कभी अलग नहीं होगी। जो चीज़ आपसे अलग होने वाली है, वह आपकी नहीं है।
- दुःख और संताप का कारण यदि कोई है तो ममता है। यह कार, यह कोठी, यह बगीचा, यह कुँआ मेरे नहीं हैं, मेरी नेश्राय में हैं। अपने विचारों में इतना सा संशोधन कर लें, परिवर्तन कर लें तो कभी दुःख का पहाड़ अपने पर नहीं गिरेगा।
- जिस वस्तु पर हमारा ममत्व है वहाँ दुःख होता है, जिस पर ममत्व नहीं है वहाँ पर दुःख नहीं होता।

-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

प्रवचन

अक्षयतृतीया : तप एवं दान का अक्षय पर्व

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

(तप एवं दान के विशिष्ट पर्व अक्षयतृतीया पर गतवर्ष २० अप्रेल २००७ को रायचूर में फरमाये गए इस प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतन मेहता, सह-संपादक,जिनवाणी ने किया है।)

तीर्थंकर भगवन्तों की अनमोल वाणी में आत्मा से परमात्मा बनने के दो सूत्र मिलते हैं- संयम और तप। शास्त्रों में कहा है- "संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।" अर्थात् संयम और तप के साथ अपनी आत्मा को भावित करते हुए जो विचरण करता है वह संयम के द्वारा आने वाले कर्मों को रोकता है और तप से पूर्व के संचित कर्मों को खपाता है। अणगारों के लिए कहा जाता है- 'तवे सूरा अणगारा।' तप में शूर अणगारों में अरिहन्त भगवन्त उत्कृष्ट तप करने वाले कहे जाते हैं। भगवान् महावीर ने छः मासी तप किया इसलिए उनके काल में छः महीने का तप किया जा सकता है। भगवान् ऋषभदेव के समय एक वर्ष तक तप हो सकता था। शास्त्र में चार-चार महीने तक तप करने वाले संतों का वर्णन मिलता है। किसी ने सिंह की गुफा पर, किसी ने सांप की बांबी पर, किसी ने कुएँ की पाल पर तप किया।

तप की अनुमोदना में आज गृहस्थ समाज भी आगे बढ़ रहा है। भगवान् महावीर के मोक्ष-मार्ग के सिद्धान्त में दान, शील, तप और भावना - ये चार मार्ग बताये हैं तो दूसरी तरफ ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप भी मोक्ष मार्ग के रूप में प्रतिपादित हैं। गृहस्थ में दान और शील की प्रधानता होती है। दान का उत्कृष्ट उदाहरण आज के दिन (अक्षय तृतीया) मिलता है। समुद्र से चाहे जितना पानी निकालो, समुद्र खाली नहीं होता। सूर्य की किरणों का चाहे जितना उपयोग करो, सूर्य की किरणें अपनी चमक नहीं खोतीं। चक्रवर्ती कितना ही खजाना लुटाये, वह कभी खाली नहीं होता।

आज अक्षय तृतीया है। आज के दिन गृहस्थ बिना पूछे व्यावहारिक काम करता है। यह तिथि जैसे गृहस्थों के लिए है वैसे संयमियों के लिए भी

है। इस दिन लिया हुआ व्रत खण्डित नहीं होता ऐसी मान्यता है। करने वाले ५० साल से वर्षीतप कर रहे हैं, कई चालीस वर्ष से कर रहे हैं। ५० वर्ष तक वर्षीतप करने वाले कोठारी जी जोधपुर में हुए। ४० वर्ष तक एकान्तर करने वाली बहिन धुलिया में देखी है। कोई तीस साल से कर रहा है, कोई बीस साल से। कल यहाँ एक बहिन २४ वर्षीतप पश्चात् २५ वाँ वर्षीतप प्रारम्भ करने का नियम लेकर गई। उस बहिन का सोच है शरीर में शक्ति है तब तक तप अखण्ड चलता रहे। ९० साल की उम्र में वर्षीतप करने वाले हैं, स्मृति कम हो रही है तो कह कर रखते हैं कि मेरी अवस्था है, इस अवस्था में भूल हो सकती है, कभी उपवास में मैं कुछ माँग लूँ तो मुझे याद दिला देना कि आज मेरे उपवास है। उनकी भावना क्या? जीऊँ तब तक तप का क्रम चलता रहे।

भगवान् महावीर ने अनशन को तप बताया तो ऊणोदरी को भी तप में शामिल किया। रात्रि भोजन त्याग भी छःमासी तप है। आप जैन हैं, ओसवाल हैं, तप के इस प्रसंग पर अनुमोदना करने आए हैं तो कम-से-कम रात्रि भोजन नहीं करेंगे, इतना नियम तो करें।

बालकेश्वर-मुम्बई में हमारा चातुर्मास था। हमने बारह साल के बच्चे को वर्षीतप करते देखा। माता-पिता प्रेरणा करते-बेटा, कर। तू जितना तप करेगा उतना तेरा ज्ञान बढ़ेगा। आज हम रात्रि भोजन त्याग की प्रेरणा करते हैं तो हमारे भाई कहते हैं- बाबजी! दूध खुलो राखजो।

आप वृत्ति मोड़ने का प्रयास कीजिए। आज के दिन व्रत लें एवं उसे अखण्डित रखें। आज दान का भी दिन है। तीर्थंकरों ने दान के प्रताप से पूर्वभव में समकित प्राप्त की है। सुखविपाक सूत्र में सुखपूर्वक मोक्ष जाने वालों का वर्णन है, वे सब दान करके उसी भव में या १५ भव में सुखपूर्वक मोक्ष गये हैं।

पाया है तो दें। खाया है तो विसर्जन करें। खाने वाला विसर्जन नहीं करे तो तकलीफ पायेगा। खाने के साथ विसर्जन जरूरी है। इसी तरह पाने के साथ देना जरूरी है। देता है वह अमर हो जाता है। अवतारी पुरुषों के नाम लेने के बजाय मारवाड़ में कहा जाता है पहली प्रहर राजा कर्ण की। राजा कर्ण मरते दम तक देता गया। पाने के साथ जितनी क्षमता हो, दिया जा सकता है। कइयों ने चाहे एक प्रतिशत हो या दो प्रतिशत अपनी आय का उपयोग परमार्थ

के लिए किया। आज भी हैं जो खाने को बैठेंगे तो एक कौर पक्षियों के लिए निकालेंगे। बहन रोटी बनाते समय पहली रोटी गाय-कुत्ते के लिए निकालती है। किसान एक कटोरी धान चबूतरे पर डाल कर अपना काम शुरु करता है।

देने वाला सम्यक्त्व प्राप्त करता है। देने वाला साधुत्व ही नहीं, केवलज्ञान प्राप्त कर सकता है। आपको तप अच्छा लगे तप करें, दान अच्छा लगे, दान दें। गरीब से गरीब व्यक्ति भी दे सकता है। आप द्रव्य नहीं दे सकते, कोई बात नहीं, ज्ञान का दान दें। मजदूर है तो वह अपने श्रम का दान दें। पाया है तो दें।

आप इन तपस्वियों को देखकर तप स्वीकार करें। किसी दाता को देखकर दान की भावना बनाएँ। मोक्ष-मार्ग में चरण बढ़ाना है तो तप करें या दान दें। 'पुण्य छता पुण्य होत है।' आप आज के दिन कोई-न-कोई व्रत-प्रत्याख्यान ग्रहण करेंगे तो आत्मा से महात्मा और महात्मा से परमात्मा बन सकेंगे।

प्रमोद-वाक्

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.

१. चरम लक्ष्य की अनुभूति का निर्णय करना **दीक्षा** है।

२. वस्तु को अपनी मानकर छोड़ना **पुण्य** है और वस्तु को परायी समझकर छोड़ना **धर्म** है।

३. काया को स्थिर रखने का प्रयास **कायाक्लेश** तप है।

४. काया पर से ध्यान हट जाना **व्युत्सर्ग** है।

५. जानते हैं पर मानते नहीं, कर सकते हैं, पर करते नहीं जैसी स्थिति **प्रमाद** है।

६. प्रवृत्ति का तात्कालिक परिणाम **आस्रव** है, प्रवृत्ति के बाद का परिणाम **बंध** है।

७. जिसके राग का दाग नहीं, द्वेष का लवलेश नहीं वही **भगवान** है।

८. अपने को छिपाने का भाव एवं अपने को दिखाने का भाव **माया** है।

९. जो कारण कार्य में सहयोग देकर निवृत्त हो जाये वह **निमित्त** तथा जो कारण कार्य रूप में परिणत होता है उसे **उपादान** कहते हैं।

१०. मिले हुए को अपना मानना **मिथ्यात्व** है।

११. **वृत्ति** अन्तःकरण की होती है जबकि **प्रवृत्ति** योगों की होती है।

-संकलन : त्रिलोकचन्द जैन, जयपुर

प्रवचन

फाल्गुनी चौमासी : आत्मशुद्धि का पर्व

मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.

'सामायिक-स्वाध्याय भवन' चौ.हा.बोर्ड, जोधपुर में दिनांक २१ मार्च २००८ को फाल्गुनी चौमासी पर्व के अवसर पर मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. द्वारा फरमाए गए इस प्रवचन का संकलन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतन मेहता द्वारा किया गया है। –सम्पादक

धर्मानुरागी बन्धुओं!

जहाँ एक ओर श्रमण भगवान महावीर स्वामी की परम-पावन वाणी का स्वाध्याय चल रहा है, भगवान की वाणी से आप-हम-सबको मंगलमय प्रेरणा मिल रही है, जीवन उन्नति का मंत्र मिल रहा है, जीवन जीने की कला मिल रही है वहीं दूसरी ओर ऐसे पावन प्रसंग हमारे सामने उपस्थित हो रहे हैं जो हमारे जीवन में-आत्मगुणों को पुष्ट करके आत्म-रमणता में बढ़ने के लिए प्रेरणा देते हैं। आज का यह फाल्गुनी चौमासी का पर्व आत्मशुद्धि का मंगलमय सन्देश लेकर उपस्थित हुआ है। आध्यात्मिक पर्व पर आचार्यों की दृष्टि हमेशा आत्म-आराधना पर केन्द्रित रही है। उनके विचार और आचार आत्मसिद्धि के रहे हैं। उनका प्रयास-पुरुषार्थ व आत्मरमणता को लेकर रहा। जो सत्य से जोड़े, सच्चे सुख में मोड़े, उसे हम पर्व का हार्द समझें, मात्र औपचारिकता में विश्वास नहीं करें, इसी में पर्व की सार्थकता है।

आज पर्व को प्रदर्शन की वस्तु बना दिया है। मात्र आमोद-प्रमोद और मनोरंजन तक पर्व सीमित हो गया है। यही कारण है कि जो पर्व हमारी संस्कृति का हिस्सा बन कर आन्तरिक प्रसन्नता को प्रकट करने में प्रेरक रहा, उस पर्व के मूल उद्देश्य से भटक कर आन्तरिक सीख के अभाव में आज भी हम समस्याग्रस्त बने हुए हैं। जैन धर्म का उद्घोष है - पुद्गलों में सुख नहीं है। सुख है तो भीतर में है। सुख है तो आत्मरमणता में है। आत्मरमणता में अनन्त सुख समाया हुआ है। अनन्त ज्ञान और अनन्त दर्शन का अधिकारी कोई है तो वह आत्मा है। व्यक्ति अज्ञानता, मूढ़ता और जड़ता के कारण से पुद्गलों में सुख ढूँढने की विफल चेष्टा करता है इसीलिए आदमी की भागम-भाग चल रही है। आज हर आदमी का एक ही ध्येय है कि मुझे

सुख मिले। आदमी जितना-जितना पौद्गलिक सुखों में भाग-दौड़ कर रहा है उतनी-उतनी मात्रा में वह आत्मिक गुणों का ह्रास कर रहा है, पुण्य क्षीण करता जा रहा है, पाप का सृजन करता जा रहा है, दुर्गति में जाने का काम कर रहा है।

आज आदमी घाणी के बैल की तरह दिन-रात चक्कर काट रहा है। घाणी के बैल की आँखों पर पट्टी बंधी होती है। वह मन-ही-मन फूला नहीं समाता कि आज तो मैंने पैंतीस कि.मी. का रास्ता पार कर लिया है। उसकी आँखों से ज्यों ही पट्टी खोली जाती है तब उसे यथार्थता का बोध होता है कि मैं जहाँ था वहीं का वहीं हूँ। बस जो घाणी के बैल की हालत है प्रायः वही हालत आज के आदमी की है। वह सोचता है कि मैंने दो प्लान्ट लगा लिये, बंगला बनवा लिया, फैक्ट्री खड़ी कर दी, गाड़ियाँ मेरे पास हैं। धन-दौलत पाकर आदमी कितना खुश होता है, पर ज्ञानियों की दृष्टि में धन-सम्पदा का कोई महत्त्व नहीं है और न जीवन की यह कोई सच्ची उपलब्धि है। ज्ञानीजन जीवन की यथार्थता धन-दौलत में नहीं मानते। आदमी आज जिस जोड़-तोड़ में लगा हुआ है, अपनी उपलब्धियों पर गुमान कर रहा है वह यथार्थ के धरातल पर सही नहीं है। आदमी ज्यों-ज्यों धन-दौलत मिलाता है त्यों-त्यों उसके संकल्प-विकल्प बढ़ते जाते हैं, उसका आर्त्त-रौद्र निरन्तर बना रहता है।

जिस दिन जीव को सम्यक् बोध हो जायेगा तो संसार की जितनी भी उपलब्धियाँ हैं, वे सारहीन लगेंगी। जीव को लगेगा कि मैंने अपना कीमती समय यों ही बर्बाद कर दिया है। वह सोचेगा कि मैंने अपने जीवन की पूँजी तो खोई है, अपने-आप पर आत्मघात जैसा कार्य भी किया है। जरुरत है-सम्यक् बोध की, जरुरत है सत्य से जुड़ने की, जरुरत है यथार्थ से सम्बन्ध जोड़ने की।

एक पत्नी अपने पति से बोली-मैं जब किसी प्रसंग से औरतों के बीच जाती हूँ तो मुझे लगता है कि हर औरत आभूषणों से लदकर आती है, लेकिन मेरे पास कुछ नहीं। आप भी मेरे लिए हार बनवा दें। वह जानती थी उसका पति इस स्थिति में नहीं, जो पाँच-सात तोले का हार बनवाकर दे सके। फिर भी पत्नी का पति से आग्रह रहा तो पति ने आर्टिफिशियल हार लाकर दे दिया। आजकल आर्टिफिशियल ज्वैलरी भी इतनी उम्दा आती है कि देखने वाला यह महसूस नहीं कर पाता कि यह असली है या नकली। पत्नी हार पाकर खुश हो गई। अब, जब भी कोई प्रसंग होता वह हार पहन कर जाती और मन-ही-मन खुश होती कि मैं भी दूसरी महिलाओं की तरह आभूषण से सज्जित हूँ। कुछ माह तक उसको खुशियाँ मिलती रहीं, किन्तु एक दिन उसका वह हार खो गया। हार खो जाने से वह रोने

लगी, खेदित होने लगी। उसे गहरा धक्का लगा, पति से कहने में भी हिम्मत नही जुटा पा रही थी।परन्तु हिम्मत करके कहा तो पति बोला-''कोई बात नहीं।'' क्यों? क्योंकि उंसे मालूम था कि वह हार असली नहीं, नकली था। संसार की नकली वस्तुओं को जो असली समझता है वह उनका वियोग होने पर दुःखी होता रहता है, किन्तु जो इन वस्तुओं की असलियत को जानता है वह इनके वियोग से दुःखी नहीं होता। इसी तरह ज्ञानीजन कहते हैं जिसका भी संयोग हुआ है उसका वियोग निश्चित है।'मेरा सो जावे नहीं और जावे सो मेरा नहीं' ज्ञानियों का यह कथन सत्य है।

संत वस्तुओं के वियोग में पीड़ा का अनुभव नहीं करते, क्योंकि वे संसार के पदार्थों को असली नहीं, नकली मानते हैं। आज आदमी नकली को असली मान रहा है, पराया है उसको अपना मान रहा है, यह कितनी बड़ी भूल है?

आज का प्रसंग हमको बोध दे रहा है कि हम भीतर का ज्ञान प्रकट करें और सच्चाई से जुड़ें। झूठा जीवन जीना संकल्प-विकल्प को बढ़ाना है, आत्मा को कर्मों से भारी करना है। आत्मा को भारी करते-करते अनन्त काल बीत गया। मैं केवल इस जन्म की बात नहीं कर रहा हूँ, ये पाप न जाने कितने-कितने भवों के हैं। पाप, पाप है वह आत्मा को गर्त्त में डालने वाला है, आत्मगुणों का नाश करने वाला है। आज यदि व्यक्ति सावधान नहीं बने तो भविष्य अंधकार में है। यदि पाप का क्रम यों ही चलता रहा तो मानकर चलिये यह जीवन आकुलता-व्याकुलता से युक्त रहने वाला है। ऐसा जीव दुर्लभ बोधि बन जायेगा। दुर्लभबोधि से मतलब है जिसको बोध होना कठिन हो जाए। दुर्लभ बोधि धनपति बन सकता है, वह साधनों का अम्बार लगा सकता है, किन्तु सच्चे ज्ञान से अनभिज्ञ रहता है। परिणामस्वरूप आर्त्त रौद्र पापकारी प्रवृत्ति, आसक्ति असंयम मर्यादाविहीन जीवन के कारण वह न केवल अपने इस भव को बिगाड़ देता है, अपितु अगले भवों को भी अंधकार में एवं दुर्गतियों में भटकने के लिए मजबूर कर देता है।

जीया कब तक उलझेगा संसार विकल्पों में।
कितने भव बीत गए संकल्प-विकल्पों में।।
कभी जन्म का दुःख झेला कभी मरण का दुःख पाया
कभी रोग बुढापे से पीड़ित हुई यह काया
अब समझ जरा चेतन कहाँ खोया विकल्पों में

बन्धुओं ! आपने अभी भजन की कड़ियों में सुना। इन पराये कामों में यह

जीव कब तक दौड़ता रहेगा। आज का दिन स्वयं के अवलोकन का दिन है। अब तक इस जीव ने परायों को देखा है दूसरों को देखा है तो कहना होगा 'दिया तले अंधेरा'। इस जीव ने किसलिए जन्म लिया ? यह जीव यहाँ क्यों बैठा है ? हाँ, जीव ने पुण्यवानी अर्जित की, इसीलिए यहाँ सब तरह की अनुकूलता मिल रही है। आप सब वणिक् हैं। वणिक् पुत्र मूल पूँजी में कमी नहीं करता। वह पूँजी बढ़ाता है तब तो सफल व्यापारी है, पर यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो लगेगा कि पुण्यवानी से जो पूँजी मिली है वह घट रही है, कम होती जा रही है। आप जानते हैं। दवा की एक्सपाइरी डेट होती है इसी तरह पुण्यवानी की भी एक्सपाइरी डेट होती है। पुण्यवानी है तब तक सब ठीक है नहीं तो तन का कपड़ा भी बैरी हो सकता है। खाया हुआ भी प्रतिकूल बन सकता है। कभी किसी को लकवा हो गया तो वह खाट पकड़ने को मजबूर हो जाता है। जीवन कब काल कवलित हो जायेगा कहा नहीं जा सकता।

संसार में कई-प्रसंग आप देखते हैं। जरूरत है उन प्रसंगों से सीख लेने की। पुण्यवानी से आज परिवार अनुकूल है, पैसा भी प्रचुर मात्रा में है, पर यदि शरीर रोगग्रस्त हो गया तो परिवार और पैसा क्या काम आयेगा ? पुण्यवानी कब क्षीण हो जाय कुछ नहीं कहा जा सकता। इसलिए पूर्व पुण्यवानी के भरोसे प्रमादी हो गये तो कहना होगा यह सबसे बड़ा अज्ञान है।

आज का दिन आत्म-साधना का दिन है। आज प्रतिक्रमण-आलोचना के माध्यम से आत्मनिरीक्षण का दिन है। संसार के कामों को करते हुए चाहे द्वेष से किसी के प्रति गांठ बाँध ली, किसी से कोई अनबन है, किसी से वर्षो पूर्व हुई खटपट आप भूले नहीं हैं तो मानकर चलना आप श्रावक भले कहला लें, किन्तु वास्तव में श्रावक नहीं। जो चौमासी का प्रायश्चित्त न करे, क्षमायाचना न करे वह श्रावक नहीं। क्योंकि कहा जाता है कि जिसके प्रति अनबन हो गई, यदि १५ दिन के भीतर खमतखामणा नहीं किया तो वह साधु कहलाने का अधिकारी नहीं है। भगवान ने स्पष्ट किया है कि खटपट हो जाने पर पहले खमतखामणा करे, उसके बाद ही गोचरी अथवा स्वाध्याय करे। आप हम अच्छी तरह जानते हैं कि कहीं घर में आग लग जाने पर आदमी कभी यह नहीं सोचता कि पहले भोजन कर लूँ, उसके पश्चात् आग बुझाने का प्रयास करूँगा। लेकिन वह तुरन्त सब काम को छोड़कर आग बुझाने की चेष्टा करता है। ठीक इसी तरह से सरल, शान्त और आत्मशुद्धि के लिए साधक पहले क्षमा याचना को महत्त्व दे, प्रेम को महत्त्व दे, सत्त्वेषु मैत्री को महत्त्व दे, यदि चार माह निकल गए एवं द्वेष की गाँठ नहीं गई तो समझना वह व्यक्ति श्रावक

कहलाने का भी अधिकारी नहीं है। और यदि साल भर बीतने को आ रहा है, लेकिन अभी तक शत्रुता का भाव, बदले का भाव नहीं गया, अभी तक अनबोले हैं, आना-जाना तक बन्द है तो ज्ञानी कहते हैं उसके समकित का भी ठिकाना नहीं। ऐसा जीव मिथ्यात्व से ग्रस्त कहलाता है। आप जानते हैं मिथ्यात्व जीव के लिए कितना खतरनाक है, कितना भटकाव का कारण है। दुर्गति, दुर्मति का हेतु मिथ्यात्व है। आज के दिन हम अन्तर में अवलोकन करें, प्रेम, प्रमोद, आत्मीयभाव को प्रधानता दें और सच्चे 'सत्वेषु मैत्री' भाव को सार्थक करें।

आपने भले ही किसी से खमतखामणा कर लिए, आना-जाना चालू हो गया, वार्ता-संवाद भी चालू हो गया, मगर कभी उसके व्यापार में घाटा लग गया, किसी प्रकार की हानि हो गई और यदि आप मन में खुश हो रहे हैं। हाँ, अब ऊँट पहाड़ के नीचे आया है तो कहना होगा अभी द्वेषबुद्धि गई नहीं है। अभी आत्मीयभाव का संचार नहीं हुआ है। और अभी प्रेम पूरित सद्भाव नहीं जागा है। सच्ची क्षमायाचना करुणा, प्रेम एवं आत्मीयभाव में प्रकट होती है।

आज चौमासी प्रतिक्रमण के माध्यम से आत्मा को शुद्ध करना है। अतिक्रमण हो सकता है, हो जाता है। विचारों की दृष्टि से भी अतिक्रमण हो जाता है। दोष दृष्टि से, असत्य मान्यता से, आदमी अतिक्रमण कर सकता है, किन्तु प्रतिक्रमण के माध्यम से उसका शुद्धीकरण करना है। पाप चाहे अज्ञानता में हो, पाप, पाप है। जहर का सेवन चाहे अज्ञान से हो गया है, किन्तु उसका प्रभाव तो होता ही है। आज आत्म-आराधन के दिन आप-हम आत्मीय गुणों को पुष्ट करें। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख और अनन्त शक्ति हमारी आत्मा में विद्यमान है। जरूरत है आवरण हटाने की। हमारी आत्मा में अनन्त सुख है, लेकिन अज्ञानता के कारण आदमी सुख के लिए बाहर भटकता है। मृग की नाभि में कस्तूरी है, लेकिन अज्ञान के कारण वह इधर से उधर और उधर से इधर दौड़ लगाता रहता है। वह नहीं जानता कि कस्तूरी तो मेरे भीतर में है। वह अज्ञान के कारण भटकता ही नहीं बल्कि जीवन लीला तक समाप्त कर जाता है। हम स्वाध्याय के माध्यम से, प्रवचन के माध्यम से सत्य से जुड़कर सद्ज्ञान के अधिकारी बनें। जब सच्चा ज्ञान हो जाएगा तो असली-नकली का भेद ज्ञात हो जाएगा, सच्चे सुख का स्रोत ज्ञात हो जाएगा और हमारा जीवन उस सच्चे सुख को प्राप्त करने में समर्थ हो सकेगा। फिर उस सद्ज्ञान के प्रभाव से द्वेषबुद्धि का नाश एवं सबके प्रति प्रेमपूरित सद्भाव जगेगा। आत्म-आराधना में पुरुषार्थ करेंगे तो जीवन को धन्य बना सकेंगे।

शोधालेख

विक्रमादित्य की ऐतिहासिकता, जैन साहित्य के सन्दर्भ में

डॉ. सागरमल जैन

भारतीय इतिहास में अवन्तिकाधिपति विक्रमादित्य का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। मात्र यही नहीं उनके नाम पर विक्रम संवत् का प्रचलन भी लगभग सम्पूर्ण देश में है। लोकानुश्रुतियों में भी उनका इतिवृत्त बहुचर्चित है। परवर्ती काल के शताधिक ग्रन्थों में उनका इतिवृत्त उल्लिखित है। फिर भी उनकी ऐतिहासिकता को लेकर इतिहासज्ञ आज भी किसी निर्णयात्मक स्थिति में नहीं पहुँच पा रहे हैं। इसके कुछ कारण हैं- प्रथम तो यह कि विक्रमादित्य विरुद के धारक अनेक राजा हुए हैं अतः उनमें से कौन विक्रम संवत् का प्रवर्तक है, निर्णय करना कठिन है, क्योंकि वे सभी ईसा की चौथी शताब्दी या उसके भी परवर्ती हैं। दूसरे, विक्रमादित्य मात्र उनका एक विरुद है, वास्तविक नाम नहीं है। तीसरे, विक्रम संवत् के प्रवर्तक विक्रमादित्य का कोई अभिलेखीय साक्ष्य ९ वीं शती से पूर्व का नहीं है। विक्रम संवत् के स्पष्ट उल्लेख पूर्वक जो अभिलेखीय साक्ष्य है वह ई. सन्८४१ (विक्रम संवत् ८९८) का है। उसके पूर्व के अभिलेखों में यह कृत संवत् या मालव संवत् के नाम से ही उल्लिखित है। चौथे, विक्रमादित्य के जो नवरत्न माने जाते हैं वे भी ऐतिहासिक दृष्टि से विभिन्न कालों के व्यक्ति हैं।

विक्रमादित्य के नाम का उल्लेख करने वाली राजा हालकृत गाथा सप्तशती की एक गाथा को छोड़कर कोई भी साहित्यिक साक्ष्य नवीं-दसवीं शती के पूर्व का नहीं है। विक्रमादित्य के जीवन वृत्त का उल्लेख करने वाले शताधिक ग्रन्थ हैं, जिनमें पचास से अधिक कृतियाँ तो जैनाचार्यों द्वारा रचित हैं। उनमें कुछ ग्रन्थों को छोड़कर लगभग सभी बारहवीं-तेरहवीं शती के या उससे भी परवर्ती काल के हैं। यही कारण है कि इतिहासज्ञ उनके अस्तित्व के सम्बन्ध में संदिग्ध हैं।

जैन स्रोतों से विक्रमादित्य विषयक जो सूचनाएँ उपलब्ध हैं, उनकी विश्वसनीयता को नकारा नहीं जा सकता है। यह सत्य है कि जैनागमों में विक्रमादित्य सम्बन्धी कोई भी उल्लेख उपलब्ध नहीं है, किन्तु जैनसाहित्य में विक्रम संवत् प्रवर्तक विक्रमादित्य का सम्बन्ध दो कथानकों से जोड़ा जाता है-

प्रथम तो कालकाचार्य की कथा से और दूसरा सिद्धसेन दिवाकर के कथानक से। इसके अतिरिक्त कुछ पट्टावलियों में भी विक्रमादित्य का उल्लेख है। उनमें यह बताया गया है कि महावीर के निर्वाण के ४७० वर्ष पश्चात् विक्रम संवत् का प्रवर्तन हुआ और यह मान्यता आज बहुजन सम्मत भी है। यद्यपि कहीं ४६६ वर्ष और ४५ दिन पश्चात् विक्रम संवत् का प्रवर्तन माना गया है। तिलोयपण्णत्ति का जो प्राचीनतम (लगभग पाँचवी-छठी शती) उल्लेख है उसमें वीर निर्वाण के ४६१ वर्ष पश्चात् शक राजा हुआ - ऐसा जो उल्लेख है उसके आधार पर यह तिथि अधिक उचित लगती है- क्योंकि कालक कथा के अनुसार भी वीर निर्वाण के ४६१ वर्ष पश्चात् कालकसूरि ने गर्दभिल्ल को सत्ता से च्युत कर उज्जैनी में शक शाही को गद्दी पर बिठाया और चार वर्ष पश्चात् गर्दभिल्ल के पुत्र विक्रमादित्य ने उन्हें पराजित कर पुनः उज्जैन पर अपना शासन स्थापित किया। दूसरी बार पुनः वीर निर्वाण के ६०५ वर्ष और पाँच माह पश्चात् शकों ने मथुरा पर अपना अधिकार कर शक शासन की नींव डाली और शक संवत् का प्रवर्तन किया। इस बार शकों का शासन अधिक स्थायी रहा। इसका उन्मूलन चन्द्रगुप्त द्वितीय ने किया और विक्रमादित्य का विरुद धारण किया। मेरी दृष्टि में उज्जैनी के शक-शाही को पराजित करने वाले का नाम विक्रमादित्य था, जबकि चन्द्रगुप्त द्वितीय की यह एक उपाधि थी। प्रथम ने शकों से शासन छीनकर अपने को 'शकारि' विरुद से मण्डित किया था। क्योंकि शकों ने उसके पिता का राज्य छीना था, अतः उसके शक अरि या शत्रु थे, अतः उसका अपने को 'शकारि' कहना अधिक संगत था। दूसरे विक्रमादित्य ने अपने शौर्य से शकों को पराजित किया था, अतः विक्रम-(पोरुष) का सूर्य था।

यद्यपि निशीथचूर्णि में कालकाचार्य की कथा विस्तार से उपलब्ध है किन्तु उसमें गर्दभिल्ल द्वारा कालक की बहिन साध्वी सरस्वती के अपहरण, कालकाचार्य द्वारा सिन्धुदेश (परिसकूल) से शकों को लाने, गर्दभिल्ल की गर्दभी विद्या को विफल कर गर्दभिल्ल को पराजित कर और सरस्वती को मुक्त कराकर पुनः दीक्षित करने आदि के ही उल्लेख हैं। उसमें विक्रमादित्य सम्बन्धी कोई उल्लेख नहीं है। जैन साहित्य में विक्रमादित्य सम्बन्धी हमें जो रचनाएँ उपलब्ध हैं- उनमें बृहत्कल्प चूर्णि (७ वीं शती) प्रभावक चरित्र (१२७७ ई.) प्रबन्धकोश (१३३९ई.) प्रबन्ध चिन्तामणि(१३०५ई.) पुरातन प्रबन्ध संग्रह, कहावली

(भद्रेश्वर), शत्रुञ्जय माहात्म्य, लघु शत्रुञ्जय कल्प, विविधतीर्थकल्प (१३३२ई.), विधि कौमुदी, अष्टाह्निक व्याख्यान, दुषमाकाल श्रमण संघ स्तुति, पट्टावली सारोद्धार, खरतरगच्छ सूरि परम्परा प्रशस्ति, विषापहारस्तोत्र भाष्य, कल्याण मन्दिर स्तोत्र भाष्य, सप्ततिका वृत्ति, विचारसार प्रकरण, विधि कौमुदी, विक्रमचरित्र आदि अनेकग्रन्थ हैं, जिनमें विक्रमादित्य का इतिवृत्त किञ्चित् भिन्नताओं के साथ उपलब्ध है। खेद मात्र यही है ये सभी ग्रन्थ प्रायः सातवीं शती के पश्चात् के हैं। यही कारण है कि इतिहासज्ञ इनकी प्रामाणिकता पर संशय करते हैं। किन्तु आचार्य हस्तीमल जी ने दस ऐसे तर्क प्रस्तुत किये हैं जिससे इनकी प्रामाणिकता पर विश्वास किया जा सकता है। उनके कथन को मैंने अपनी शब्दावली में आगे प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है(देखें-जैन धर्म का मौलिक इतिहास खण्ड-२, पृ ५४५-५४८)।

(१) विक्रम संवत् आज दो सहस्राब्दियों से कुछ अधिक काल से प्रवर्तित है, अतः इसका प्रवर्तक कोई न कोई अवश्य होगा - बिना प्रवर्तक के इसका प्रवर्तन तो सम्भव नहीं है और यदि अनुश्रुति उसे 'विक्रमादित्य' (प्रथम) से जोड़ती है तो उसे पूरी तरह अस्वीकार भी नहीं किया जा सकता है। मेरी दृष्टि में अनुश्रुतियाँ केवल काल्पनिक नहीं होती हैं।

(२) विक्रमादित्य से सम्बन्धित अनेक कथाएँ आज भी जनसाधारण में प्रचलित हैं, उनका आखिर कोई तो आधार रहा होगा। केवल उन आधारों को खोज न पाने की अपनी अक्षमता के आधार पर उन्हें मिथ्या तो नहीं कहा सकता है। जिस इतिहास का इतना बडा जनाधार है उसे सर्वथा मिथ्या कहना भी एक दुस्साहस ही होगा।

(३) प्राचीन प्राकृत ग्रन्थ गाथा सप्तशती, जिसे विक्रम की प्रथम-द्वितीय शती में सातवाहन वंशी राजा हाल ने संकलित किया था-उसमें विक्रमादित्य की दानशीलता का स्पष्ट उल्लेख है। यह उल्लेख चन्द्रगुप्त (द्वितीय) विक्रमादित्य के सम्बन्ध में या उससे परवर्ती अन्य विक्रमादित्य उपाधिधारी किसी राजा के सम्बन्ध में नहीं हो सकता है, क्योकि वे इस संकलन से परवर्ती काल में हुए हैं, अतः विक्रम संवत् की प्रथम शती से पूर्व कोई अवन्ती का विक्रमादित्य नामक राजा हुआ है यह मानना होगा। यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि विक्रमादित्य राजा हाल के किसी पूर्वज सात वाहन वंशी राजा से युद्ध क्षेत्र में

आहत होकर मृत्यु को प्राप्त हुए थे। वह गाथा निम्न है-

संवाहणसुहरस्स तोसिएण, देन्तेण तुहकरे लक्खं।
चलणेण विक्कमाइच्च चरिअमणुसिक्खिअं तिस्सा।।

-गाथा सप्तशती ४६४

(४) सातवाहन वंशी राजा हाल के समकालीन गुणाढ्य ने पैशाची प्राकृत में बृहत्कथा की रचना की थी। उसी आधार पर सोमदेव भट्ट ने संस्कृत में कथासरित्सागर की रचना की - उसमें भी विक्रमादित्य के विशिष्ट गुणों का उल्लेख है (देखें - लम्बक ६ तरंग १ तथा लम्बक १८ तरंग १)

(५) भविष्यपुराण और स्कन्दपुराण में भी विक्रम का जो उल्लेख है, वह नितान्त काल्पनिक है- ऐसा नहीं कहा जा सकता है। भविष्यपुराण खण्ड- २ अध्याय २३ में जो विक्रमादित्य का इतिवृत्त दिया गया है - वह लोक परम्परा के अनुसार विक्रमादित्य को भर्तृहरि का भाई बताता है तथा उनका जन्म शकों के विनाशार्थ हुआ ऐसा उल्लेख करता है। अतः इस साक्ष्य को पूर्णतः नकारा नहीं जा सकता है।

(६) गुणाढ्य(ई. सन् ७८) द्वारा रचित बृहत्कथा के आधार पर क्षेमेन्द्र द्वारा रचित बृहत्कथा मंजरी में भी विक्रमादित्य का उल्लेख है। उसमें भी म्लेच्छ, यवन, शकादि को पराजित करने वाले एक शासक रूप में विक्रमादित्य का निर्देश किया गया है।

(७) श्रीमद् भागवत स्कन्ध १२ अध्याय १ में जो राजाओं की वंशावली दी गई है, उसमें दशगर्दभिनो नृपाः के आधार पर गर्दभिल्ल वंश के दस राजाओं का उल्लेख है। जैन परम्परा में विक्रम को गर्दभिल्ल के पुत्र के रूप में उल्लिखित किया गया है।

(८) विक्रम संवत् के प्रवर्तन के पूर्व जो राजा हुए उनमें किसी ने विक्रमादित्य ऐसी पदवी धारण नहीं की। जो भी राजा विक्रमादित्य के पश्चात् हुए हैं- उन्होंने ही विक्रमादित्य का विरुद धारण किया है- जैसे सातकर्णी गौतमी पुत्र (लगभग ई. सन् प्रथम-द्वितीय शती) चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (ई. सन् चतुर्थ शती) आदि- इन्होंने विक्रमादित्य की यशोगाथा को सुनकर अपने को उसके समान बताने हेतु ही यह विरुद धारण किया है। अतः गर्दभिल्ल पुत्र विक्रमादित्य इनसे पूर्ववर्ती है।

(९) बाणभट्ट के पूर्ववर्ती कवि सुबन्धु ने वासवदत्ता के प्रास्ताविक श्लोक १० में विक्रमादित्य की कीर्ति का उल्लेख किया है।

(१०) ई.पू. की मालवमुद्राओं में मालवगण का उल्लेख है, वस्तुतः विक्रमादित्य ने अपने पितृराज्य पर पुनः अधिकार मालवगण के सहयोग से ही प्राप्त किया था, अतः यह स्वाभाविक था कि उन्होंने मालव संवत् के नाम से ही अपने संवत् का प्रवर्तन किया। यही कारण है कि विक्रम संवत् के प्रारम्भिक उल्लेख मालव संवत् या कृत संवत् के नाम से ही मिलते हैं।

(११) विक्रमादित्य की सभा के जो नवरत्न थे, उनमें क्षपणक के रूप में जैनमुनि का भी उल्लेख है, कथानकों में इनका सम्बन्ध सिद्धसेन दिवाकर से जोड़ा गया है, किन्तु सिद्धसेन दिवाकर के काल को लेकर स्वयं जैन विद्वानों में भी मतभेद है, अधिकांश जैन विद्वान् भी उन्हें चौथी-पाँचवी शती का मानते हैं, किन्तु जहाँ तक जैन पट्टावलियों का सम्बन्ध है, उनमें सिद्धसेन का काल वीर निर्वाण संवत् ५०० बताया गया है; इस आधार पर विक्रमादित्य और सिद्धसेन की समकालिकता मानी जा सकती है।

(१२) आचार्य हस्तीमल जी ने इनके अतिरिक्त एक प्रमाण प्राचीन अरबी ग्रन्थ सेअरूल ओकूल (पृ.३१५) का दिया था - जिसमें 'विकरमतुन' के उल्लेख पूर्वक विक्रम की यशोगाथा वर्णित है। इस ग्रन्थ का काल विक्रम संवत् की चौथी-पाँचवी शती है। यह हिजरी सन् से १६५ वर्ष पूर्व की घटना है।

इस प्रकार विक्रमादित्य (प्रथम) को मात्र काल्पनिक व्यक्ति नहीं कहा जा सकता है। मेरी दृष्टि में गर्दभिल्ल के पुत्र एवं शकशाही से उज्जैनी के शासन पर पुनः अधिकार करने वाले, विक्रमादित्य एक ऐतिहासिक व्यक्तित्व हैं, इससे नकारा नहीं जा सकता है। उन्होंने मालव गण के सहयोग से उज्जैनी पर अधिकार किया था, यही कारण है कि यह प्रान्त आज भी मालव देश कहा जाता है।

(१३) जैन परम्परा में विक्रमादित्य के चरित्र को लेकर जो विपुल साहित्य रचा गया है, वह भी इस तथ्य की पुष्टि करता है कि किसी न किसी रूप में विक्रमादित्य(प्रथम) का अस्तित्व अवश्य रहा है। विक्रमादित्य के कथानक को लेकर जैन परम्परा में निम्न ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं-

(१) **विक्रमचरित्र**- यह ग्रन्थ काशहृदगच्छ के देवचन्द्र के शिष्य देवमूर्ति द्वारा

लिखा गया है। इसकी एक प्रतिलिपि में प्रतिलिपि लेखन संवत् १४९२ उल्लिखित है, इससे यह सिद्ध होता है कि यह रचना उसके पूर्व की है। इस ग्रन्थ का एक अन्य नाम सिंहासन - द्वात्रिंशिका भी है। इसका ग्रन्थ परिमाण ५३०० है। कृति संस्कृत में है।

(२) विक्रमचरित्र नामक एक अन्यकृति भी उपलब्ध है, इसके कर्ता पं. सोमसूरि हैं। ग्रन्थ परिमाण ६००० है।

(३) विक्रमचरित्र नामक तीसरी कृति साधुरत्न के शिष्य राजमेरू द्वारा संस्कृत गद्य में लिखी गई है। इसका रचनाकाल वि.सं. १५७९ है।

(४) विक्रमादित्य के चरित्र से सम्बन्धित चौथी कृति **'पञ्चदण्डाल-पत्र छत्र प्रबन्ध'** नामक है। यह कृति सार्धपूर्णिमा गच्छ के अभयदेव के शिष्य रामचन्द्र द्वारा वि.सं.१४९० में लिखी गई थी। यह एक लघुकृति है। इसकी अनेक प्रतियाँ विभिन्न भण्डारों में उपलब्ध हैं। वेबर ने इसे १८७७ में बर्लिन से प्रकाशित भी किया है।

(५) पञ्चदण्डात्मक विक्रमचरित्र नामक अज्ञात लेखक की एक अन्य कृति भी मिलती है। इसका रचना काल १२९० या १२९४ है।

(६) पञ्चदण्ड छत्र प्रबन्ध नामक एक अन्य विक्रम चरित्र भी उपलब्ध होता है, जिसके कर्ता पूर्णचन्द्र बताये गये हैं।

(७) श्री जिनरत्नकोश की सूचनानुसार - सिद्धसेन दिवाकर का एक विक्रमचरित्र भी मिलता है। यदि ऐसा है तो निश्चय ही विक्रमादित्य के अस्तित्व को सिद्ध करने वाली यह प्राचीनतम रचना होगी। केटलाग केटा गोरम भाग प्रथम के पृ.सं. ७१७ पर इसका निर्देश उपलब्ध है। यह अप्रकाशित है और कृति के उपलब्ध होने पर ही इस सम्बन्ध में विशेष कुछ कहा जा सकता है।

(८) इसी प्रकार **'विक्रम नृप कथा'** नामक एक कृति के आगरा एवं कान्तिविजय भण्डार, बडौदा में होने की सूचना प्राप्त होती है। कृति को देखे बिना इस सम्बन्ध में विशेष कुछ कहना संभव नहीं है।

(९) उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त **'विक्रम प्रबन्ध'** और **'विक्रम प्रबन्ध कथा'** नामक दो ग्रन्थों की और सूचना प्राप्त होती है। इसमें विक्रम प्रबन्ध कथा के लेखक श्रुतसागर बताये गये हैं। यह ग्रन्थ जयपुर के किसी जैन

भण्डार में उपलब्ध है।

(१०) **विक्रमसेन चरित** नामक एक अन्य प्राकृत भाषा में निबद्ध ग्रन्थ की भी सूचना उपलब्ध होती है। यह ग्रन्थ किसी जैनमुनि के शिष्य पद्मचन्द्र द्वारा लिखित है। पाटन केटलाग भाग१ के पृ. १७३ पर इसका उल्लेख है।

(११) विक्रमादित्य चरित्र नामक दो कृतियाँ उपलब्ध होती हैं, उनमें प्रथम के कर्ता रामचन्द्र बताये गये हैं। मेरी दृष्टि में यह कृति वही है, जिसका उल्लेख 'पञ्चदण्डालछत्र प्रबन्ध' के नाम से किया जा चुका है। दूसरी कृति के कर्ता तपागच्छ मुनिसुन्दर सूरि के शिष्य शुभशील बताये गये हैं। इसका रचनाकाल वि.सं. १४९० हैं।

(१२) पूर्णचन्द्र सूरि के द्वारा रचित **'विक्रमादित्य पञ्चदण्ड छत्र प्रबन्ध'** नामक एक अन्य कृति का उल्लेख भी 'जिनरत्नकोश' में हुआ है। यह एक लघु कृति है, इसके ग्रन्थाग्र ४०० है।

(१३) **'विक्रमादित्य धर्मलाभादि प्रबन्ध'** के कर्ता मेरुतुंगसूरि बताये गये हैं। इसके लिए भी कान्ति विजय भण्डार बडौदा में होने की सूचना प्राप्त होती है।

(१४) जिनरत्नकोश में विद्यापति के 'विक्रमादित्य प्रबन्ध' की सूचना भी प्राप्त है। उसमें इस कृति के सम्बन्ध में विशेष निर्देश उपलब्ध नहीं होते हैं।

(१५) 'विक्रमार्क विजय' नामक एक कृति भी प्राप्त होती है। इसके लेखक के रूप में गुणार्णव का उल्लेख हुआ है।

इस प्रकार जैन भण्डारों से विक्रमादित्य से सम्बन्धित पन्द्रह से अधिक कृतियों के होने की सूचना प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त मरूगुर्जर और पुरानी हिन्दी में भी विक्रमादित्य पर कृतियों की रचना हुई है। इसमें तपागच्छ के हर्षविमल ने वि.स. १६९० के आस-पास 'विक्रम रास' की रचना की थी। इसी प्रकार उदय भानु ने वि.सं. १५६५ में 'विक्रम सेन रास' की रचना की। प्राच्य विद्यापीठ शाजापुर में भी विक्रमादित्य की चौपाई की अपूर्ण प्रति उपलब्ध है। इस प्रकार जैनाचार्यो ने प्राकृत संस्कृत, मरूगुर्जर और पुरानी हिन्दी में विक्रमादित्य पर अनेक कृतियों की रचना की है - ऐसी अनेकों कृतियों का नायक पूर्णतया काल्पनिक व्यक्ति नहीं माना जा सकता है। *-निदेशक, प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर(म०प्र०)*

शोधालेख

श्रमणाचार : स्वरूप और चिन्तन (४)

उपाध्याय श्री रमेश मुनि जी शास्त्री

छह आवश्यक– श्रमण के लिये छह आवश्यकों की सुव्यवस्था है।[८] इनके नाम इस प्रकार निरूपित हैं–

१. सामायिक	**२. चतुर्विंशतिस्तव**
३. वन्दना	**४. प्रतिक्रमण**
५. कायोत्सर्ग	**६. प्रत्याख्यान**

श्रमण के लिये ये षडावश्यक नित्यप्रति करणीय होते हैं। प्रतिदिवस दो बार अर्थात् दिन और रात्रि की समाप्ति के समय इन आवश्यकों की श्रमण द्वारा आराधना की जाती है। षडावश्यक श्रमण को अन्तर्दर्शन की सप्राण प्रेरणा देता है। यह साधना अन्तर्दर्शन की विशिष्ट साधना है। जो साधना अन्तर्दर्शन नहीं कराती, वह साधना नहीं, विराधना है। 'आवश्यक' जैन साधना का अभिन्न अंग है। जो अवश्य किया जाय, वह आवश्यक है। अथवा जो आत्मा को दुर्गुणों से हटाकर सद्गुणों के अधीन करे, वह आवश्यक है। इन्द्रिय और कषाय जिस साधना–पद्धति से पराजित किये जायें, वह आवश्यक है। अन्तर्दृष्टि श्रमण का लक्ष्य बाह्य पदार्थ का भोग नहीं होता है। आत्मशोधन ही उसकी साधना का एक मात्र उद्देश्य होता है। जिस साधना से आत्मा सहज और स्थायी सुख का अनुभव करे, कर्म–मल को विनष्ट कर, अजर, अमर पद प्राप्त करे तथा सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र की अक्षय ज्योति जिससे जगमगाये, उसे ही वह आवश्यक मानता है। अपनी भूलों को देखकर एवं उनके संशोधनार्थ कुछ न कुछ क्रिया करना आवश्यक है।

श्रमण के लिये प्रातः एवं सायंकाल आवश्यक करना अनिवार्य है। श्रमण यदि नियमतः आवश्यक नहीं करता है, तो वह धर्म–मार्ग से च्युत हो जाता है। यदि दोष लगा है तो भी और दोष न लगा है तो भी अवश्य ही आवश्यक करना चाहिये। छह आवश्यकों का संक्षिप्त रूप से परिचय दिया जा रहा है। जिससे से उनका महत्त्व

---

८. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन २९, प्रश्न ९ से १४

स्पष्ट हो सकेगा।

१. सामायिक– यह वह विशिष्ट प्रक्रिया है जिससे श्रमण के मन में समता का भाव जाग्रत होता है। स्थावर और त्रस सभी प्रकार के जीवों के प्रति समत्व का भाव रखना श्रमण का पवित्र कर्त्तव्य होता है। जो मन, वचन और काया की पाप-प्रवृत्तियों से विमुख होकर अपनी आत्मा को निरवद्य व्यापार में संलग्न करता है उसी को सामायिक की प्राप्ति होती है। संयम, नियम, तप में लीन आत्मा ही इस उच्चतम अवस्था को प्राप्त कर सकता है। श्रमण सामायिक-साधना द्वारा अपनी आत्मा के भीतर झांकने लगता है। उसका दृष्टिकोण बहिर्जगत् से संवरित हो जाता है और साधक अन्तर्मुखी हो जाता है। आध्यात्मिक जगत् में सामायिक की बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। यह विशिष्ट क्रिया सभी साधनाओं के मूल में आधार रूप में कार्य करती है और इसी के कारण साधक समस्त-सावद्य प्रवृत्तियों से विमुख होकर नियन्त्रित मन, वचन और काय से यतनापूर्वक आचरण करता है। वस्तुतः यही स्थिति स्वयं में सामायिक की स्थिति है।

२. चतुर्विंशति स्तव– यह साधक श्रमण की दूसरी आवश्यक प्रवृत्ति है। वह नित्य क्रिया द्वारा समभाव के समर्थ अभ्यासी एवं उपदेशक चौबीस तीर्थंकरों का स्तवन(स्तुति)करता है। इस क्रिया का महत्त्व इस दृष्टि से स्वीकार किया जाता है कि इससे श्रमण की आध्यात्मिक शक्ति विकसित होती है, उसका साधना का मंगलमय महामार्ग भी अतीव सुगम हो जाता है और वह संयम के क्षेत्र में दृढ़तम होता चलता है। मोक्षदायक साधना को सबल बनाने के प्रयोजन से तीर्थंकर-संस्तुति एक अति सशक्त साधन है।

३. वन्दना– वन्दना या वन्दन का मौलिक आशय 'गुरुस्तव' से है। श्रमण के लिये तीर्थंकर के पश्चात् गुरु ही वन्दनीय स्थान रखता है। गुरु साधक श्रमण के लिये परम सहायक और अति कुशल मार्गदर्शक है। श्रमण के लिये गुरु एक अनुकरणीय आदर्श होता है। गुरु के गुणों के प्रति श्रद्धा के परिणाम-स्वरूप ही गुरु वन्दनीय हो जाता है। गुरु के प्रति भक्ति का भाव होना अति आवश्यक है। श्रमण को गुरु ही धर्म मार्ग पर प्रवृत्त करता है और सुस्थिर रखता है। उसे प्रगति के लिये संप्रेरित करता है। गुरु के प्रति श्रद्धा मिश्रित आदर भाव जब कायिक रूप से व्यक्त होता है तो वह अभिवादन या प्रणाम कहलाता है और जब वह वचनों से व्यक्त होता है तो वह

गुरुस्तव है। गुरु गुणों का आकर होता है। अपरिमित गुणशीलता गुरु की विशेषता है। गुरु का एक अर्थ है- जो क्षुद्र या लघु नहीं है, जो स्थूल या भारी है। गुरु का यह भारीपन गुणों के सन्दर्भ में ही है। गुणवान् के वन्दन-अभिवादन से भी आध्यात्मिक-शक्ति का समुत्कर्ष होता है, उसका विकास होता है। गुणहीन को सदा अवन्दनीय और अश्रद्धेय माना गया है। उसकी वन्दना से अनेक प्रकार के अशुभ-परिणाम होते हैं। संयम हीनता और अनाचार को विशेष रूप से प्रश्रय मिलता है। ऐसी वन्दना पापकर्मों का बन्ध कराती है।

४. प्रतिक्रमण- यह आवश्यकों के क्रम में - चतुर्थ आवश्यक है। इसका अर्थ है - प्रमादवश शुभ योग से हटकर, अशुभ योग को प्राप्त करने के बाद पुनः शुभ योग को प्राप्त करना तथा अशुभ योग को छोड़कर उत्तरोत्तर शुभ योग में रमण करना। इसी सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, प्रमाद और अप्रशस्त योग ये पाँच दोष साधना के क्षेत्र में अतीव भयंकर माने गये हैं। अतएव श्रमण को इन दोषों के परिहार हेतु प्रतिक्रमण करना चाहिये। मिथ्यात्व का परित्याग कर सम्यग्दर्शन को प्राप्त करना चाहिये। अविरति को छोड़कर व्रत को अंगीकार करना चाहिये। कषाय से उन्मुक्त होकर क्षमा,सरलता, निर्लोभता धारण करनी चाहिये। अप्रशस्त योगों को छोड़कर प्रशस्त योगों में रमण करना चाहिये, जिससे श्रमण का आध्यात्मिक - अभ्युदय संभव है। उसका जीवन सद्गुणों की ज्योति से प्रकाशमान होता है और दुर्गुणों का तिमिर तिरोहित हो जाता है।

अपेक्षा दृष्टि से प्रतिक्रमण के पाँच प्रकार हैं।

१. दैवसिक **२. रात्रिक**

३. पाक्षिक **४. चातुर्मासिक**

५. साम्वत्सरिक

कालभेद की दृष्टि से प्रतिक्रमण के तीन प्रकार प्रतिपादित हैं-

१. अतीतकाल में लगे हुए दोषों की आलोचना करना।

२. वर्तमान में संवर कर दोषों से मुक्त होना।

३. भविष्यत् कालीन दोषों से मुक्त होने के लिये प्रत्याख्यान करना।

प्रतिक्रमण के अपेक्षाकृत दो प्रकार भी निरूपित हैं-

१. द्रव्य प्रतिक्रमण

२. भाव प्रतिक्रमण

द्रव्य प्रतिक्रमण का अर्थ है - उपयोग रहित। केवल परम्परा की दृष्टि से, यशः कामना की भावना से पाठों का उच्चारण करना, पर उसका जीवन में आचरण नहीं करना। द्रव्य प्रतिक्रमण प्राण रहित शरीर के समान है, जो जीवन में आलोक प्रदान नहीं कर सकता।

भाव प्रतिक्रमण का अर्थ है- उपयोग सहित वीतराग की आज्ञानुसार, किसी प्रकार की लौकिक-कामनाओं से रहित होकर कर्म-मल से उन्मुक्त होने के लिये जीवन का सिंहावलोकन करना भाव प्रतिक्रमण है। वस्तुतः भाव प्रतिक्रमण ही साधना का सौन्दर्य है।

प्रतिक्रमण की साधना आध्यात्मिक साधना है। आत्मा मूलतः सर्वथा निर्मल है, पर अनादि अनन्त काल से राग और द्वेष से ग्रसित होने के कारण अपने अतीव निर्मल परम ज्योतिर्मय स्वरूप को विस्मृत हो गया है। जब वह उसे समझने का प्रयास करता है, तब भी अनादि अभ्यासवश भूलें कर देता है। पर जब तक उन भूलों और अपराधों का परिष्कार न हो, तब तक आध्यात्मिक विकास नहीं हो सकता है। प्रतिक्रमण उन दोषों का परिमार्जन करता है और पुनः भूलें न करने के लिये जागरूक रहता है। वास्तविकता यह है कि प्रतिक्रमण करने से आत्म-निरीक्षण का स्वर्णिम-समय मिलता है। त्याग के प्रति निष्ठा जागृत होती है। स्वाध्याय करने से मन और वचन में विशुद्धता आती है। यह एक ऐसी रसायन है, जिस का परिसेवन सभी जीवों के लिये विशेष रूप से हितावह है।

इसी सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि मानवोचित व्यवहार और स्वभाव से श्रमण भी सर्वथा मुक्त नहीं हैं। लाख सावधानी रखते हुए भी किसी प्रकार के प्रमाद हो जाने की भी आशंका रहती है। किन्तु साधक श्रमण ऐसी स्थिति में अशुभ प्रवृत्ति से शीघ्र ही परावर्तित होकर शुभ प्रवृत्ति की ओर उन्मुख हो जाता है। यही आवश्यक क्रिया 'प्रतिक्रमण' है। प्रमादवश ही सही, मन, वचन, और काया से किये गये, कराये गये अथवा अनुमोदित पापकर्म से जब श्रमण अवगत हो जाता है तो वह प्रायश्चित्त करता है। उसकी आलोचना करता है और अपने दोषपूर्ण आचरण को संशोधित करता है। पुनः शुभोन्मुखी हो जाता है। इस प्रकार प्रतिक्रमण-अधोगति के क्रम को स्थगित कर देता है और श्रमण को पुनः ऊर्ध्वगतिप्रदान करता है। यहाँ

यह भी ध्यातव्य है कि करणीय का नहीं किया जाना और अकरणीय का किया जाना- ये दोनों ही समान रूप से प्रतिक्रमण की अपेक्षा रखते हैं। उदाहरणार्थ हिंसा, चौर्य आदि श्रमण के लिये अकरणीय हैं। प्रमादवश यदि साधक इनमें ग्रस्त हो जाय तो उसे प्रतिक्रमण करना पड़ता है। साथ ही सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वन्दना आदि उसके लिये करणीय हैं। यदि श्रमण इनमें संप्रवृत्त नहीं होता तो ऐसी स्थिति में भी उसके लिये अशुभ की प्रवृत्ति मानी जायेगी। निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है- प्रतिक्रमण एक ऐसी विशिष्ट क्रिया है, जिसके द्वारा श्रमण अपने जीवन में दोषों का परिष्कार करता है और सद्गुणों की दिव्य-ज्योति को विकीर्ण कर देता है, यही प्रतिक्रमण-आवश्यक की फलश्रुति है।

५. कायोत्सर्ग – कायोत्सर्ग का तात्पर्य मूलतः काया के प्रति ममत्व भावना का त्याग ही है। इस त्याग के साथ आत्म-स्वरूप में रमण करना अनिवार्य है। आत्मलीन अन्तर्मुखी श्रमण के लिये न केवल उसकी काया, अपितु समस्त बहिर्जगत् उपेक्षित हो जाता है। परिणामतः जो भी कायिक-विपत्तियाँ उपस्थित होती हैं, श्रमण उनमें समभाव रखता है। प्रतिदिन कायोत्सर्ग की साधना द्वारा श्रमण इस दिशा में चिन्तन करता है कि आत्मा शरीर से भिन्न है। मैं आत्मा हूँ, चैतन्य स्वरूप हूँ और काया अचेतन है। शरीर पर मेरा ममत्व होना अनुचित है। ऐसे अभ्यास से वह शारीरिक कष्टों से अविचलित होना सीख जाता है। ये कष्ट उसके नहीं, शरीर के हैं। शरीर- जो स्वयं उससे (आत्मा से) भिन्न है, उसके कष्ट में वह क्यों विचलित हो? यह आन्तरिक स्थैर्य ही है, जो अविचल ध्यान का रूप ले लेता है और वही कायोत्सर्ग में प्रमुख होता है।

६. प्रत्याख्यान– श्रमण के लिये प्रत्याख्यान भी एक महत्त्वपूर्ण आवश्यक क्रिया है। शाब्दिक दृष्टि से प्रत्याख्यान का अर्थ है-त्याग। हिंसायुक्त पदार्थों का तो वैसे ही पूर्णतः त्याग होता है और श्रमण के लिये वे अग्राह्य होते हैं। जिन अहिंसा युक्त पदार्थों का सेवन निषिद्ध नहीं है, वे पदार्थ श्रमण के लिये ग्राह्य होते हैं। साधक-श्रमण इन बाह्य पदार्थों में से भी कुछ का किसी अवधि-विशेष के लिये अथवा सदा के लिये ही परित्याग कर देता है। यह प्रत्याख्यान है। जो श्रमण को अनेक उपयोगी मानसिक-वृत्तियों का सफल अभ्यास कराता है साधक इससे अभिलाषाओं का नियन्ता बन कर लोभ लालच आदि पर विजय प्राप्त करने का कौशल अर्जित कर लेता है। प्रत्याख्यान का यही अभ्यास उसे अशुभ प्रवृत्तियों के त्याग की ओर

उन्मुख करता है और इसके परिणाम स्वरूप शुभ प्रवृत्तियों के लिये वह सचेष्ट भी हो जाता है।

यह पूर्णतः स्पष्ट है कि श्रमण-जीवन में त्याग का बड़ा महत्त्व है। यह त्याग श्रमण के प्रति श्रद्धा विकसित करता है। त्याग-मार्ग में जितने अविचल और दृढ़तम श्रमण होते हैं, अन्य किसी के जीवन में कदाचित् ही इसकी समकक्षता पायी जाती हो। कभी-कभी किसी त्याग के सन्दर्भ में कुछ अपवादों का प्रावधान भी होता है। इसके विपरीत कुछ त्याग ऐसे भी होते हैं, जिनके सन्दर्भ में किसी भी अपवाद का प्रावधान नहीं होता है। त्याग के अन्तर्गत श्रमण कभी खाद्य-सामग्रियों के प्रकार, संख्या अथवा उनकी मात्रा का निर्धारण कर लेता है और दृढ़तापूर्वक उनका पालन करता है। त्याग इस रूप में भी होता है - मुझे जब तक अमुक वस्तु प्राप्त न होगी, तब तक मैं आहार आदि का सेवन नहीं करूँगा। ये प्रत्याख्यान दीर्घ काल के बाद पूर्ण होते हैं। विचारित परिस्थिति लम्बे समय तक आती ही नहीं है और संकल्पी श्रमण पूर्ण निष्ठा और सहिष्णुता के साथ अपने प्रत्याख्यान का पालन करता रहता है। वह विचलित नहीं होता है। इस प्रकार प्रत्याख्यान के अनेक प्रकार होते हैं। **(क्रमशः)**

धर्म का महत्त्व

श्री अरिहन्त 'अप्पा'

जग में सुख प्राप्ति का यह धर्म ही आधार है,
जो कुसंस्कारों को नष्ट कर, करता बेड़ा पार है।।१।।

ऐसा धर्म जो संप्रदाय की बेड़ियों से मुक्त हो,
अहिंसा, संयम, तप और ब्रह्मचर्य से युक्त हो।।२।।

विरतिमय मणियों की मालाएँ जिनके पास हैं,
नर-तिर्यंच की बात क्या, देवगण भी उनके दास हैं।।३।।

नित्यता के इस धर्म को, अनित्य देह में अपनाना है,
'अप्पा' सो परमप्पा का लक्ष्य हमें बनाना है।।४।।

-साधना भवन, ए-९, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर

Knowledge in Jaina Philosophy

*Dr. Dharm Chand Jain**

Knowledge : a characteristic of a soul

In Jaina philosophy knowledge (jñāna) is an essential, natural, identical and inseparable characteristic of a soul. Jaina philosophers do not accept a soul without knowledge. It is an inevitable characteristic of a soul, because it represents the consciousness and without consciousness a soul cannot be defined. Although Nyāya-Vaiśeṣika philosophers propound that the soul in the state of salvation remains without consciousness and knowledge, but Jaina philosophers do not agree with them and refute the notion of Nyāya-Vaiśesikas. The Jaina philosophers have similarity to some extent with the Vedantins. Vedantins define Brahma or Atman as 'Sacchidananda' (Vedantasara,33). Here 'cit (chit)' is the synonym of knowledge or chaitanya. Jaina also define soul as-

नाणं च दंसणं चेव, चरित्त च तवो तहा।
वीरियं उवओगो य, एयं जीवस्स लक्खणं।।

-Uttaradhyayan Sūtra, 28.11

nāṇam ca dansaṇam ceva Carittam ca tavo tahā
Vīriyam uvaogo ya, eyam jīvassa lakkhaṇam.

A soul has characteristics like- Knowledge, intuition, conduct, austerity, energy and consciousness. Thus Jaina propound some more characteristics of a soul than Vedantins accept, but these two philosophies are agreed on the point that knowledge is an essential characteristic of a soul.

Jaina philosopher Umasvati propounds 'Upayoga' as the main characteristic of a soul in his renowned work Tattvārthasūtra (2.8). Upayoga is of two kinds- (i) Jñāna (knowledge) and (ii) Darśana (in-articulate cognition). These two are the categories of cognition. Jñāna is an articulate

---

*[Prof. Jain has presented this paper in the National seminar organised by Asiatic society, Kolkata during 11th-12th March 2005]

cognition (Sākāropayoga) and Darśana is an in-articulate cognition (Anākāropayoga). Darśana and Jñāna have an essential order. Darśana or Anākāropayoga occurs first and then after Jñāna or Sākāropayoga takes place.

The Jaina conception of knowledge has its most significant place in the sphere of Indian philosophy. According to Jaina philosophy no one soul can exist without knowledge. All the souls of the world including the organisms like tree, fire, water etc. having one sense of touch also have a characteristic of knowledge. Even liberated souls also have knowledge. Liberated souls have complete knowledge which is called kevalajñāna and the worldly souls have atleast two types of knowledge matijñāna & srutajñāna. Here, one thing is to be clarified that knowledge in Jainism is accepted either as samyak (right) or as Mithyā (wrong or perverted). If the souls have right view or Samyag Darśana then they have right knowledge and if they are possessed of perverted attitude then they have Mithyājñāna or ajñāna. The word 'ajñāna' in Jaina system does not denote the complete absence of knowledge, but it indicates the pervertedness of the knowledge. In this way the living beings bearing one sense-organ of touch are possessed of ajñāna, but it is true that the phenomenon of cognition is also found always there. The creatures like caterpillar, ant, termite, butterfly also have knowledge in the form of ajñāna. Thus knowledge or cognition is an essential and inseparable characteristic of a soul.

jñānāvaraṇa karman : Obstruction in manifestion of knowledge

Jaina thinkers accept that every 'bhavya' soul has a capability of becoming omniscient, but the bondage of jñānāvaraṇa karman is the obstruction in its manifestation. Whenever a soul destructs the Karman bondage of jñānāvaraṇa completely, the pure and complete knowledge Kevaljñāna rises at the moment. Before rising of kevaljñāna Mohaniya Karman is destructed. Darśanavarana Karma and Antarāya Karma also

get destructed altogether with jñānāvaraṇa. Umāsvati says-

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम्।

-Tattvārtha Sūtra, 10.1

[Mohaksayāj-jñāna darśanāvaranāntarāyacca kevalam.]

Causation of knowledge

According to Jaina philosophy knowledge does not come from outside. It always manifests in the soul after the destruction (kṣaya) or subsidence-cum - destruction (Kṣayopaśama) of Jñānāvaraṇa Karman. Although we know the objects through sense-organs and quasi-sense, but these are only the instruments. The knowledge does not manifest in them. Knowledge is an attribute of a soul. In the view of Jaina thinkers light and objects are not the real causes of the origination of the knowledge. Although their presence helps in the manifestation of the knowledge to us, but these are not needed for the person who has supersensuous intuition, therefore the Jaina philosophers do not accept the direct causation of light and object. Ācārya Hemchandra says- "नार्थालोकौ ज्ञानस्य निमित्तमव्यतिरेकात्। बाह्यो विषयः प्रकाशश्च न चक्षुर्ज्ञानस्य साक्षात्कारणम्; देशकालादिवत्तु व्यवहितकारणत्वं न निवार्यते, ज्ञानावरणादिक्षयोपशमसामग्र्या-मारादुपकारित्वेनाञ्जनादिवच्चक्षुरूपकारित्वेन चाभ्युपगमात्।" (Pramāṇa Mīmāmsa 1-1-25 vritti) [Nārthālokau Jñānasya nimittama-vyatirekāt. Bāhyo viṣayaḥ prakāśaśca na cakṣurjñānasya sāksāt Kāraṇam; deśakāladivattu vyavahitakāraṇatvam na nivāryate, jñāṇāvaraṇādikṣayopaśamasāmagryāmārādupakārit-venāñjānādivaccakṣuru-pakāritvena chābhyupagamāt.] Light and object are the general causes like space & time. These are not the direct causes of generating knowledge in the living being. Further Hemācandra says- " मरुमरीचिकादौ जलाभावेऽपि जलज्ञानस्य, वृषदंशादीनां चालोकाऽभावेऽपि सान्द्रतमतमःपटलविलिप्त-देशगतवस्तुप्रतिपत्तेश्च दर्शनात्। योगिनां चाऽतीतानागतार्थग्रहणे किमर्थस्य निमित्तत्वम् निमित्तत्वे चाऽर्थक्रियाकारित्वेन सत्त्वादतीतानागतत्वक्षतिः। (Pramāṇa- mīmāmsā 1.1.25 Vritti). In the mirage we know

water inspite of it's absence. some animals like cow, cat etc. can see in the night without light, hence light and object are not the real causes of the knowledge. Yogins know the objects of past, present and future but causation of the objects is not seen there.

Svapara-Prakāśakatva

Jaina philosophers propound that knowledge illuminates it self and the object. Svaparaprakāśakatva is the general characteristic of the knowledge. In the view of Jaina philosophers, if a knowledge does not illuminate itself, then it cannot illuminate the objects also. They give an example of the sun, which illuminates itself and the objects as well. (niyamasāra, tātparyavṛtti, 159, pramāṇanaya tattvāloka 1.17)

Samyag jñāna : two types

I want to attract your attention towards the problem of samyagjñāna or right knowledge. We find two types of samyagjñāna in Jaina literature. First type of Samyagjñāna is included in the trio-jewels which lead the path of salvation. This Samyagjñāna is linked with Samyagdarśana or right view. In the presence of right view or samyagdarśana the existing knowledge converts into Samyag-jñāna (Sarvārtha siddhi 1.1.7). On the contrary in the presence of mithyādarśana or midhyātva the existing knowledge is called as ajñāna or Mithyā-jñāna. Mithyādarśana is a perverted view of the soul which leads to mundane world and Samyag-darśana leads the soul the path of salvation. (सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः। Tattvārtha Sūtra, 1.1). This is the first form of Samyag-jñāna found in Jaina canons and latter literature.

The second type of samyag-jñāna is found only in the epistemological literature. When Jaina philosophers define pramāṇa (an organ of valid knowledge) as samyag-jñāna-सम्यग्ज्ञानं प्रमाणम् (Pramāṇa-parīksā of Vidyānanda, Vira Seva Mandir, Delhi 1977 & Nyāyadīpikā p. 9 of Abhinavadharma-bhūṣaṇa, Vira sevāmandir, Delhi, 1968). Vidyānanda (775-840 A.D.) and Abhinavadharmabhuṣaṇa have given definition of pramāna as samyagjñāna, but here samyag-jñāna is not linked

with the inevitable presence of samyag-darśana. In defining pramāṇa samyag-jñāna has another characteristic i.e. devoidness of doubt (samśaya); illusion (Viparyaya) and Indeterminateness (Anadhyavasāya). The knowledge determining the self and the object and devoidness of doubt, illusion and indeterminateness is called pramāṇa (प्रकर्षेण संशयादिव्यवच्छेदेन मीयते परिच्छिद्यते वस्तुतत्त्वं येन तत् प्रमाणं प्रमायां साधकतमम्-Pramāṇāmīmāmsa 1.1.1. Vritti & Nyāya Kumuda candra, Vol. I p.4.8)

Thus the Samyag-jñāna defined as pramāṇa is different from the samyag-jñāna leading to liberation. The basic difference in these two is of inner view. First one right knowledge is leading the path of salvation and another one is linked with our empirical behaviour. First one may be compared with Parāvidyā of Upaniṣadas and second one with aparāvidyā. Vattakera in Mūlācāra defines samyag-jñāna as follows:-

जेण तच्चं विबुज्झेज्ज जेण चित्तं णिरुज्झदि।
जेण अत्ता विसुज्झेज्ज तं णाणं जिणसासणे।।
जेण रागा विरज्जेज्ज जेण सेएसु रज्जदि।
जेण मित्ती पभावेज्ज, तं णाणं जिणसासणे।।

- Mūlācāra, Bhāratīya jñānapitha, Delhi, 1992, Verses 267-268

By which the truth is known, by which the mind is restrained and by which the soul is purified is the knowledge in Jaina-teachings.

By which a man abstains from attachment, by which he engages himself in welfare and by which friendly behaviour with everybody takes place is the knowledge in Jaina-teachings.

This knowledge is placed in trio-jewels leading to path of liberation, but Jaina scholars accept the empirical world as a reality, so they developed their own epistemological fundamentals.

(Continue in next issue)

-Editor, Jinvāni

ओ महावीर को मानने वाले

तेरा ध्यान किधर है.....?

श्री चन्द्रेश भण्डारी

ओ महावीर को मानने वाले,
तेरा ध्यान किधर है?
क्या महावीर धरती पर नहीं,
इसलिये, तू बेखबर है?
अरे नादान उन्होंने तो तुझे
कितना किया सावधान,
पर फिर भी तू आँखों पर
लोभ और लालच की पट्टी बाँधे
इसको गिराया, उसे पटाया,
उसको फँसाया, इसे उलझाया
तेरी-मेरी, हेरा-फेरी
करते खुश हो रहा है,
'आत्मा' के सबसे बड़े गुण
करुणा और प्रेम को भूल रहा है।
क्या कहा तुमने?
महावीर की खूब जय-जयकार करते हो।
लेकिन क्या फायदा इससे?
तुम महावीर को तो मानते हो,
लेकिन महावीर की नहीं मानते।
क्योंकि तुम महावीर को न 'जानते' हो,
न ही 'समझते' हो।
महावीर का मार्ग त्याग का मार्ग है,
महावीर की पहचान अहिंसा से है,
अनेकान्त और अपरिग्रह उनके जीवन सूत्र हैं,
'जीओ और जीने दो' उनका जीवन दर्शन है।

महावीर को जानना और समझना है,
तो अहंकार और ममकार को छोड़ना होगा।
अपने 'मैं' का अंतिम संस्कार करना होगा।
आँखों पर बँधी लालच और स्वार्थ की पट्टी खोलकर,
करुणा और प्रेम से जगत को निहारना होगा।
क्या कर पाओगे तुम ऐसा?
ये तुम्हें स्वयं सोचना और निर्णय लेना है,
क्योंकि तुम्हारा भविष्य स्वयं तुम्हारे हाथ है,
तुम्हारे 'स्वयं का मूल्य' जीवन में सबसे मूल्यवान है।
क्योंकि महावीर ने कहा था,
'अप्पा सो परमप्पा'। आत्मा ही परमात्मा है।
'जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ'।
जो एक (आत्मा)को जान लेता है, वह सबको जान लेता है।
तो भय्या लाल,
अब भी चेत जा, समय बचा है।
प्रभु की सीख मानकर कर्म खपाले और
पुण्य कमा ले,
भव सागर तिर जायेगा,
और मोहरूपी नींद को त्याग दिया,
तो तू आत्मा से परमात्मा बन जायेगा।

-ओम शान्ति, ३४२, कमला नेहरू नगर, जोधपुर

अनुकरणीय प्रयास

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् की 'आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना' के अन्तर्गत योजना का लाभ ले रहे समस्त विद्यार्थियों को श्री पी. शिखरमल जी सुराणा, चेन्नई (अध्यक्ष, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल) के सौजन्य से जिनवाणी मासिक पत्रिका का आजीवन सदस्य बनाया गया है। इस हेतु श्री पी. शिखरमल जी सुराणा ने रुपए २,००,०००/- जमा करवाये हैं। मण्डल परिवार की ओर से सुराणा परिवार को अनेक-अनेक साधुवाद।

-मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

शोधालेख

जीवन-मृत्यु का आधार : आयुष्यकर्म (४)

श्री गौतमचन्द जैन

आयुष्य बंध के छः प्रकार

प्रत्येक संसारी जीव जब वर्तमान भव में, अगले भव की आयुष्य का बंध करता है तो यह नियम है कि वह आयु बंध के साथ-साथ गति, जाति, अवगाहना, स्थिति, अनुभाग व प्रदेश का भी बंध कर लेता है। आगम में यह वर्णन निम्नानुसार उपलब्ध होता है-

"कतिविधे णं भंते! आउय बंधे पण्णत्ते? गोयमा! छव्विधे आउय बंधे पण्णत्ते। तं जहा-जातिणाम-णिहत्ताउए१ गइनामनिहत्ताउए २. ठितीनाम निहत्ताउए ३. ओगाहणा णाम विहत्ताउए ४. पदेसणाम णिहत्ताउए ५. अणुभाव णाम- णिहत्ताउए।[३१]

भगवन्! आयुष्यबंध कितने प्रकार का कहा गया है?

गौतम! आयुष्यबंध छह प्रकार का कहा गया है, यथा- (१) जातिनाम निधत्तायु (२) गतिनाम निधत्तायु (३) स्थितिनाम निधत्तायु (४) अवगाहनानाम निधत्तायु (५) प्रदेशनाम निधत्तायु (६) अनुभाव नाम निधत्तायु।

ऐसा ही वर्णन ठाणांग सूत्र एवं भगवती सूत्र में भी उपलब्ध होता है।

(१) जातिनामनिधत्तायु: - एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक पाँच प्रकार की जाति है तद्भव जो नाम (अर्थात् जाति नाम रूप नाम कर्म की एक उत्तरप्रकृति अथवा जीव का एक प्रकार का परिणाम) वह जाति नाम है। उसके साथ निधत्त(प्रति समय अनुभव में आने के लिए कर्म पुद्गलों की रचना को प्राप्त निषेक) जो आयु, उसे जातिनाम निधत्तायु कहते हैं। अर्थात् आयु कर्म के बंध के साथ जाति नाम कर्म का नियम से बंधना।

(२) गतिनाम निधत्तायु: - नरक, तिर्यच, मनुष्य और देव ये चार प्रकार की गति होती है, तद्भव जो नाम वह गतिनाम है। उसके साथ निधत जो आयु उसे

---

३१. प्रज्ञापना सूत्र, पद ६, सूत्र सं.६८४
स्थानांग, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर सूत्र ११६, पृष्ठ ५४७ वही
भगवती सूत्र, ६/८/२७ पृष्ठ ८७

गतिनामनिधत्तायु कहते हैं। अर्थात् आयु कर्म के बंध के साथ गति नाम कर्म का नियम से बंधना।

(३) स्थितिनाम निधत्तायुः– किसी भव में विवक्षित समय तक जीव का रहना स्थिति कहलाता है, अथवा आयु कर्म की अनुभूति करता हुआ जीव जिस पर्याय में अवस्थित रहता है, वह स्थिति है। उसके साथ जो निधत्त आयु उसे स्थिति नाम निधत्तायु कहते हैं। अर्थात् आयु कर्म बंध के साथ स्थिति का नियम से बंधना।

(४) अवगाहनानामनिधत्तायुः– जीव जिसमें अवगाहित होकर रहता है, उसे अवगाहना कहते हैं- वह है औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण शरीर, उसके साथ निधत्तायु अवगाहनानाम निधत्तायु कहलाती है। अर्थात् आयु कर्म बंध के साथ कौनसा शरीर मिलेगा यह भी निश्चित हो जाता है।

(५) प्रदेशनामनिधत्तायुः– प्रदेशों का अथवा आयुष्यकर्म के द्रव्यों का उस प्रकार का नाम-परिणमन वह प्रदेशनाम अथवा प्रदेशरूप एक प्रकार का नाम कर्म है, वह है प्रदेश नाम, उसके साथ निधत्तायु प्रदेशनाम निधत्तायु कहलाती है।

(६) अनुभाग नाम निधत्तायुः– अनुभाग अर्थात् आयुष्यकर्म के द्रव्यों का विपाक, तद्रूप जो नाम (परिणाम) वह है अनुभाग नाम। उसके साथ निधत्त जो आयु वह अनुभाग नाम निधत्तायु कहलाती है।

"कर्म सिद्धांत का यह नियम है कि जब किसी भी प्रकृति का बंध होगा, तो उसी समय उसकी स्थिति, अनुभाग और प्रदेशों का भी बंध होगा। सूत्रोक्त छह प्रकार में से तीसरा, पाँचवा और छठा प्रकार इसी बात का सूचक है तथा आयु कर्म के बंध के साथ ही तज्जातीय जातिनामकर्म का, गति नाम कर्म का और शरीर नाम कर्म का नियम से बंध होता है।

इसे हम और सरलता से निम्न उदाहरण द्वारा समझ सकते हैं- जैसे कोई जीव किसी समय देवायुकर्म का बंध कर रहा है, तो उसी समय आयु के साथ ही पंचेन्द्रिय जाति नाम कर्म का, देवगति नाम कर्म का और वैक्रिय शरीर नाम कर्म का भी नियम से बंध होता है तथा देवायु के बंध के साथ ही बंधने वाली पंचेन्द्रिय जाति नाम कर्म, देवगति नाम कर्म और वैक्रिय शरीर नाम कर्म का स्थिति बंध, अनुभाव बंध और प्रदेश बंध भी करता है।"

अकाल मृत्यु : क्यों व कैसे ?

आयुष्य कर्म के उक्त विवेचन से संसारी जीवों के एक भव से दूसरे भव में

गमन अथवा चतुर्गतिक संसार में परिभ्रमण का विश्लेषण प्रस्तुत होता है। पर मन में जिज्ञासा उत्पन्न होना स्वाभाविक है कि भयंकर दुर्घटनाओं में भी कोई-कोई आदमी कैसे जीवित रह जाते हैं? उनका बाल भी बाँका नहीं होता है, जबकि कई बार अच्छे-भले स्वस्थ एवं हट्टे-कट्टे व्यक्ति भी हल्की सी ठोकर लगने मात्र से काल कवलित हो जाते हैं। ऐसा क्यों ?

कर्म सिद्धान्त उपर्युक्त जिज्ञासाओं का समाधान इस प्रकार से प्रस्तुत करता है-

आयुष्य बंध दो प्रकार का कहा गया है।

(१)सोपक्रम आयु – जो आयु पूरी भोगे बिना, कारण विशेष से अकाल में टूट जावे, वह सोपक्रम आयु है।

(२) निरुपकम आयु– जो आयु बंध के अनुसार पूरी भोगी जाती है।[३२]

कर्म ग्रन्थ १ में आयु कर्म के दो प्रकार बतलाए गए-

(१) अपवर्तनीय आयु– बाह्य निमित्त से जो आयु कम हो जाती है, उसको अपवर्तनीय आयु या अपवर्त्यायु कहते हैं। तात्पर्य यह है कि जल में डूबने, शस्त्रघात, विषपान आदि बाह्य कारणों से सौ पचास आदि वर्षो के लिए बांधी गई आयु को अन्तर्मुहूर्त में भी भोग लेना आयु का अपवर्तन है। इस आयु को जन साधारण की भाषा में या व्यावहारिक बोलचाल में अकाल मृत्यु भी कहते हैं।

(२) अनपवर्तनीय आयु– जो आयु किसी भी कारण से कम न हो। जितने काल के लिए बाँधी गई है, उतने काल तक भोगी ही जावे, वह आयु अनपवर्तनीय आयु या अनपवर्त्यायु कहलाती है।[३३]

तत्त्वार्थसूत्र में वर्णन है-''औपपातिकचरमदेहोत्तमपुरुषाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः।।''[३४]

अर्थात् उपपात जन्म लेने वाले नारक और देवता, चरम शरीरी (तद्भवमोक्षगामी, उस शरीर से मोक्ष जाने वाले), उत्तमपुरुष अर्थात् तीर्थकर, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव आदि और असंख्यातवर्ष जीवी (युगलिक)- देवकुरु

---

३२. भगवती सूत्र शतक २० उद्देशक-१० सूत्र १ पृष्ठ ७२

३३. कर्मग्रन्थ प्रथम, पृष्ठ ९१/९२

३४. तत्त्वार्थ सूत्र २.५२

उत्तरकुरु आदि में उत्पन्न मनुष्य और तिर्यंच अनपवर्तनीय आयु वाले होते हैं।

बंधने वाली आयु अपवर्तनीय है या अनपवर्तनीय, इस बात का निर्णय आयु बंधक जीव के परिणामों के तारतम्य पर आधारित है। भावी जन्म की आयु, वर्तमान जन्म में बांधी जाती है। उस समय यदि परिणाम मंद हो तो आयु का बंध शिथिल होता है, जिससे निमित्त मिलने पर बंधकालीन कालमर्यादा घट जाती है। इसके विपरीत यदि परिणाम तीव्र हो तो आयु का बंध गाढ़ होता है, जिससे निमित्त मिलने पर भी बंधकालीन काल मर्यादा नहीं घटती और न आयु को एक साथ भोगा जा सकता है अर्थात् जितनी स्थिति के लिए आयु बांधी है, उतनी पूरी-पूरी भोगनी ही पड़ेगी।

अपवर्तनीय आयु वाले प्राणियों को शस्त्र आदि निमित्त मिलने पर वे अकाल में ही मर जाते हैं और अनपवर्तनीय आयु वालों को कैसा भी प्रबल निमित्त क्यों न मिले, वे अकाल में नहीं मरते।

आयुष्य टूटने के कारण:- स्थानांग सूत्र में आयुर्भेद(अकाल मरण) के सात कारण कहे गए हैं-*सत्तविधे आउ भेदे पण्णत्ते, तंजहा-अज्झवसाण-निमित्ते, आहारे वेयणा पराघाते। फासे आणापाणू, सत्तविधं भिज्जए आउं।।*[३५]

१. राग-द्वेष, भय आदि भावों की तीव्रता से।
२. शस्त्राघात आदि के निमित्त से।
३. आहार की हीनाधिकता या निरोध से।
४. ज्वर, आतंक या रोग आदि की तीव्रवेदना से।
५. पर के आघात से, गड्ढे आदि में गिरने से।
६. सांप आदि के स्पर्श से-काटने से।
७. आन-पान-श्वासोछ्वास के निरोध से।

अंतगडदशांग में सोमिल ब्राह्मण के अकाल मरण के प्रंसग में इनका स्पष्टीकरण निम्नानुसार किया गया है-

१. **अज्झवसाण-** अध्यवसाय-स्नेह या भय रूप प्रबल मानसिक आघात होने पर आयु समय से पहले ही समाप्त हो जाती है।
२. **निमित्त-** शस्त्र, दण्ड, अग्नि आदि का निमित्त पाकर आयु शीघ्र समाप्त हो जाती है।

---

३५. स्थानांगसूत्र - सप्तम स्थान सूत्र ७२ पृष्ठ ५८१

३. **आहार**– अधिक भोजन करने से आयु घट जाती है।

४. **वेदना**– किसी भी अंग में असह्य वेदना होने पर आयु के दलिक समय से पूर्व ही उदय में आकर आत्मा से झड़ जाते हैं।

५. **पराघात**– गड्ढे में गिरना, छत का ऊपर गिर जाना, आदि बाह्य आघात पाकर आयु की उदीरणा हो जाती है।

६. **स्पर्श**–विद्युत्प्रवाह आदि का स्पर्श होने से असमय में आयु समाप्त हो जाती है।

७. **आण–पाण**– श्वास की गति बंद हो जाने पर आयु भेद हो जाता है। यहाँ इतना ध्यान रखना आवश्यक है कि बंध काल में आयु कर्म के जितने दलिक बंधते हैं, उन सबका भोग तो जीव को करना ही पड़ता है, केवल वह भोग स्वल्प काल में हो जाता है, तब वह मृत्यु, स्थिति की अपेक्षा अकाल मरण कही जाती है।[३६]

अब प्रश्न उठता है कि नियत काल मर्यादा के पहले आयु का भोग हो जाने से कृतनाश, अकृतागम और निष्फलता जैसे दोष लगेंगे जो शास्त्र में इष्ट नहीं है।

इसका समाधान यह है कि अपवर्तनीय आयु में पूर्वोक्त दोषों की संभावना बिल्कुल नहीं हैं, क्योंकि अपवर्तनीय आयुष्य में भी बंधी हुई आयु पूर्ण रूप से भोगी जाती है। बद्धायु का कोई भी अंश ऐसा नहीं बचता जो भोगा न जाता हो। इतना अवश्य है कि इसमें बँधी हुई आयु काल–मर्यादा के अनुसार न भोगी जाकर एक साथ शीघ्र भोग ली जाती है। इसलिए इस आयु में न तो कृतकर्म का नाश है और न बद्ध आयु कर्म की निष्फलता है तथैव बद्धआयु कर्म के अनुसार आने वाली मृत्यु होने से अकृत कर्म दोष भी नहीं है।[३७]

दीर्घकालिक मर्यादा वाला आयुष्यकर्म अन्तर्मुहूर्त में कैसे भोग लिया जाता है, इसे समझने के लिए तीन दृष्टान्त प्रस्तुत हैं–

(१) जैसे सूखी घास के सघन ढेर में एक तरफ छोटी सी चिनगारी डाल दी जावे तो वह उस तृणराशि के एक–एक तिनके को क्रमशः जलाते–जलाते उस सारे ढेर को बहुत अधिक समय में जला पाती है, किन्तु कोई उस घास के ढेर को ढीला करके उसमें चारों ओर से चिनगारी डाल देता है और अनुकूल वायु चल रही हो तो वह

---

३६. अन्तकृद्दशा सूत्र, तृतीय वर्ग अध्ययन ८, सूत्र सं. २६ पृष्ठ ८०/८१

३७. तत्त्वार्थ सूत्र, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी, पृष्ठ ८०-८१

शीघ्र ही एक साथ उस सारे घास को जला डालती है। इस प्रकार से अपवर्तनीय आयु के भोगने में सिर्फ देरी और जल्दी का अन्तर पड़ता है।

(२) जैसे गणित के एक जटिल प्रश्न को हल करने के लिए एक सामान्य व्यक्ति गुणा-भाग की लम्बी रीति का आश्रय लेता है जबकि दूसरा गणितशास्त्री उसी प्रश्न को हल करने के लिए संक्षिप्त रीति का आश्रय लेता है किन्तु उत्तर दोनों का एक समान होता है।

(३) जैसे एक धोया हुआ कपड़ा जल से भीगा हुआ इकट्ठा करके रख दिया जाये तो बहुत देर से सूखता है, परन्तु उसी कपड़े को खूब निचोड़कर धूप में फैला दिया जाता है तो वह तत्काल सूख जाता है। इसी तरह अपवर्तनीय आयुष्य में शस्त्र आदि का निमित्त मिलते ही आयु कर्म के समस्त दलिक एक साथ शीघ्रता से भोगे जाते हैं। भावार्थ यह है कि बँधा हुआ आयुष्य कर्म पूर्ण रूप से भोगा जाता है।''[३८]

उक्त संपूर्ण विवेचन से स्पष्ट परिलक्षित होता है कि आयुष्य कर्म हमारे जीवन में कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। जीवन मिला है तो उसमें सम्यक् पुरुषार्थ करें जिससे संसार सीमित हो और जिस गति का आयुष्य कर्म बांधना हो, उसके अनुरूप पुरुषार्थ करना चाहिए। दूसरी बात यह कि हमें यह मालूम नहीं पड़ता है कि अपना आयुष्य कर्म बंध गया है या नहीं बंधा है। अतः हमें अपने जीवन में प्रतिपल सजग रहना चाहिये।

हम यह जानने में भी असमर्थ हैं कि आयुष्य कर्म कब बंधेगा। इसलिए सदैव जागृत रहना है। ऐसा बताया जाता है कि प्रायः दूज, पंचमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी पूर्णमासी, अमावस्या आदि पर्व तिथियों के दिनों में आयुष्य कर्म बंधता है। इसलिए पर्व दिनों में विशेष प्रकार की धर्म आराधना करने एवं पापों का त्याग करने के नियम बनाए गए हैं। 'पव्वेसु पोसहवयं' पर्व दिनों में पौषध व्रत करने का ज्ञानी पुरुषों ने उपदेश दिया है। पौषध-व्रत यानी सर्वथा पाप-निवृत्ति की धर्मक्रिया। गृहस्थों के लिए यह व्रत बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। पर्व दिनों में यह व्रत लिया हो और आयुष्य कर्म बंध जाए तो सद्गति का आयुष्य कर्म बंध सकता है। कभी पर्व के दिनों में नहीं, चालू दिनों में भी आयुष्य कर्म बंध सकता है। इसलिए प्रतिक्षण सजग रहना एवं पाप का त्याग करना अति आवश्यक है। **(समाप्त)**

-१९२ बी, मीटरगेज लोको के सामने, बजरिया, सवाईमाधोपुर

३८. तत्त्वार्थ सूत्र, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी, पृष्ठ ८०-८१

जनमे वीर, रतन हैं बरसे

विद्यावारिधि डॉ. महेन्द्र सागर प्रचण्डिया

आज कुण्डपुर धन्य हो गया,
जीवन का सब दैन्य खो गया।
माता-पिता निहाल हो गये, अंतरंग है सबके सरसे,
जनमे वीर, रतन हैं बरसे ।।१ ।।

घर-घर बजने लगे मँजीरे,
नाचें-गाएँ धीरे-धीरे।
राजकीय उपहार बटे औ, लेने आये निज घर-घर से।
जनमे वीर, रतन हैं बरसे ।।२ ।।

दूर हुई सब की चिन्ताएँ,
नहीं किसी को कभी सताएँ।
हिल-मिल रहने लगे परस्पर, सारे मन-मानस में हरसे।
जनमे वीर, रतन हैं बरसे ।।३ ।।

दास-प्रथा का हुआ विसर्जन,
समता का अब हो परिपालन,
नारी का सम्मान हो उठा, निज रक्षा को कोई न तरसे।
जनमे वीर, रतन हैं बरसे ।।४ ।।

जगें सभी औ करें खूब श्रम,
आपस में अब रहे नहीं भ्रम,
रहे सशंकित यहाँ न कोई, मुक्त होय हर कोई डर से।
जनमे वीर, रतन हैं बरसे ।।५ ।।

मंगल कलश, सर्वोदय नगर, अलीगढ़-२०२००१

तत्त्वज्ञान

उपांगों में पुण्य तत्त्व (२)

(राजप्रश्नीय सूत्र में पुण्य)

सुश्री नेहा चोरडिया, जलगाँव

द्वितीय अंग सूत्रकृतांग।
राजप्रश्नीय कहला रहा उसका उपांग।
हिंसा-झूठ में मिथ्यावश राजा का रंग।
चर्चा केशी श्रमण के संग।
मिटा परदेशी के भीतर का जंग।
राजा के प्रश्न राजप्रश्नीय के अंग।
हो जाए अज्ञान अविवेक भंग।
सूर्याभदेव की भक्ति का जिसमें वर्णन है।
गौतमस्वामी का प्रभुचरणों में पृच्छावश अर्चन है।
सूर्याभदेव के पूर्व भव का कीजिए कथन है।
मनमोहक मोहक प्रभु ने किया निरूपण है।

इस विस्तृत विवेचन में गुरु की अनन्त कृपा से पुण्य की उपादेयता का पोषण किया जा रहा है रायप्पसेणीय के संदर्भित सूत्रों से तथ्य का चिंतन करें-

(१) तएणं तस्स सूरियाभस्स इमे एयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था। सेयं खलु मे समणे भगवं महावीरे जंबूदीवे दीवे भारहे वासे आमलकप्पाए णयरीए बहिया अम्बसालवणे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तं महाफलं खलु तहारूवाणं भगवंताणं णाम-गोयस्स वि सवणयाए किमंग पुण अभिगमण-वंदण-णमंसण-पडिपुच्छण-पज्जुवासणयाए? एगस्स वि आरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए? तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि णमंसामि सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगल देवयं चेइयं पज्जुवासामि,एयं मे पेच्चा हियाए सुहाए खमाए णिस्सेसयाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ त्ति कट्टु।

सूर्याभदेव के मन में ऐसा भाव, चिंतन, प्रार्थित-अभीप्सित की प्राप्ति हेतु विचार तथा संकल्प उत्पन्न हुआ- श्रमण भगवान् महावीर स्वामी जंबूद्वीप के अन्तर्गत भारतवर्ष में आमलकल्पा नगरी के बहिर्भाग में, आम्रशालवन नामक चैत्य में आचार, मर्यादानुरूप आवास स्थान स्वीकार कर, संयम एवं तप द्वारा

आत्मानुभावित होते हुए विराजित हैं। उनके नाम एवं गोत्र का श्रवण भी अत्यन्त फलप्रद है, फिर उनके सम्मुख वंदन, अभिगमन, पर्युपासना की तो बात ही क्या? एक भी आर्य-उत्तम धर्म का, महापुरुषोपदिष्ट एक ही धर्म तत्त्व का श्रवण अत्यन्त फलप्रद है तो फिर विशाल अर्थ को ग्रहण करने का अवसर पाने का तो कहना ही क्या? अतः मेरे लिये यह श्रेयस्कर होगा कि मैं श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वंदन-नमन करूँ, सत्कार-सम्मान करूँ। वे मंगलमय, कल्याणमय, देवस्वरूप एवं चिन्मय रूप हैं। मैं उनकी पर्युपासना करूँ। ऐसा करना मेरे लिए पारलौकिक दृष्टि से हितप्रद, सुखप्रद, क्षांतिप्रद एवं निश्रेयस्कर अर्थात् मोक्षरूप फलप्रद होगा।

विश्लेषण- यहाँ सूर्याभदेव के मन में भगवान् महावीर के दर्शन, वंदन एवं पर्युपासना की अभिलाषा उत्पन्न हुई। परन्तु इस देव भव में वह संयम ले नहीं सकता, संयमपूर्वक तप नहीं कर सकता। तब भगवान् के दर्शन, वंदन, धर्म का श्रवण ये सारी बातें क्या सूचित कर रही हैं? इस भव में वह समकित संवर, विनय, स्वाध्याय, धर्मध्यान सहित पुण्य का अभिवर्धन कर सकता है। यह पुण्य परभव में हित करने वाला, सुख प्रदान करने वाला, क्षांति प्रदान करने वाला, निश्रेयस्कर अर्थात् मोक्षरूप फल प्रदान करने वाला हो सकता है- अविरत के लिए संयम-तप अधिक संभव नहीं, पुण्य संयम-तप के योग्य बनाने वाला हो सकता है तभी 'पेच्चा हियाए'- आगमवाणी का स्पष्ट उद्घोष है। मुक्तिरूपी अमरफल को प्रदान करने वाला संवर-निर्जरा से पूर्व यह पुण्य ही है। भवी जीव के लिए हितकारक, उत्तरोत्तर श्रेणी में आरोहण कराने वाला पुण्य ही है तो अभवी जीव के लिए उत्कृष्ट ३१ सागरोपम तक सुख प्रदान करने वाला भी यह पुण्य ही है।

(२) सूर्याभदेव को पुण्य का वर्धापन करने हित दर्शन की भावना हुई, अतः विमानवासी देव-देवियों को घंटे का निनाद कर घोषणा करवायी, अलग-अलग भावों को लेकर देव-देवियाँ एकत्रित हुए, उन भिन्न-भिन्न भावनाओं को देखते हैं इस सूत्र में-

तए णं से सूरियाभविमाणवासिणो बहवे वेमाणिया देवा देवीओ य पायत्ताणियाहिवइस्स देवस्स अंतिए एयमट्ठंसोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठजाव हियया अप्पेगइया वंदणवत्तियाए अप्पेगइया पूयणवत्तियाए अप्पेगइया सक्कारवत्तियाए एवं सम्माणवत्तियाए कोउहलवत्तियाए अप्पेगइया० अस्सुयाइं सुणिस्सामो सुयाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो, अप्पेगइया सूरियाभस्स देवस्स वयणमणुयत्तमाणा अप्पेगइया अण्णमण्णमणुयत्तमाणा अप्पेगइया जिणभत्तिरागेणं अप्पेगइया धम्मोत्ति

अप्पेगइया जीयमेयं तिकट्टु सव्विड्ढिए जाव अकालपरिहीणा चेव सूरियाभस्स देवस्स अंतियं पाउब्भवंति।

सूर्याभदेव की भगवान् के दर्शन की घोषणा से सूर्याभदेव के विमानवासी देव इस अभिप्राय को सुनकर हर्षित हुए। कितने ही देव वंदन करने के भाव से, कितने ही मन, वचन एवं काय से सविनय पर्युपासना करने के भाव से, कितने ही सत्कार करने के भाव से, कितने ही सम्मान करने के भाव से, कितने ही कौतुहल देखने के भाव से, कितने ही अश्रुत अर्थ को सुनेंगे इस भाव से तो कितने ही सूर्याभदेव की आज्ञा है इसलिए, कितने ही दूसरे देव जा रहे हैं इसलिए हमें भी जाना चाहिए इस कारण से तो कितने ही जिनभक्ति के राग को लेकर, कितने ही यह हमारा धर्म है इस भाव को लेकर, कितने ही यह हमारा 'जीत' नाम का कल्प है इस अभिप्राय को लेकर शीघ्रातिशीघ्र सूर्याभदेव के पास आए।

विश्लेषण– भगवान् के दर्शन–वन्दन का भाव शुभ अध्यवसाय रूप पुण्य का ही प्रतीक है। पुण्य के उदय से ही चित्त में भगवान् के दर्शन की भावना जागृत होती है। दर्शन, वंदन, पर्युपासना करने से जीव को बोध प्राप्त होता है। अर्थात् पुण्योदय से ही जीव का विकास संभव है। अतः यह पुण्य हेय कैसे? उपादेय ही है।

(३) सूर्याभदेव की भक्ति देख गौतमस्वामी को हुई इच्छा, अतः भगवान् से की पूर्व भव की पृच्छा– अथ से इति तक भगवान् ने की विवेचना–प्रारम्भ में था क्रूर राजा– वह अधार्मिकता के साथ दंडित करता था प्रजा को और विस्तृत विवेचन देखते हैं इस सूत्र में–

तत्थ णं सेयवियाए णयरीए पएसी णामं राया होत्था, महयाहिमवंत जाव विहरइ। अधम्मिए, अधम्मिट्ठे, अधम्मक्खाई, अधम्माणुए, अधम्मपलोई, अधम्मपजणणे, अधम्मसीलसमुयायारे, अधम्मेण चेव वित्तिं कप्पेमाणे 'हण'– 'छिंद' 'भिंद' पवत्तए, लोहियपाणी, पावे, रुद्दे, खुद्दे, साहस्सीए, उक्कंचण–वंचण–माया–णियडि–कूड–कवड–साई संजोग बहुले, णिस्सीले, णिव्वए, णिग्गुणे, णिम्मेरे, णिपच्चक्खाणयो सहोववासे, बहूणं दुपय–चउप्पय–मिय–पसु–पक्खी सिरिसवाणं घायाए वहाए उच्छायणयाए अधम्मकेऊ, समुट्ठिए....।

श्वेताम्बिका (सेयविया) नगरी, प्रदेशी राजा, जो पर्वतों के सदृश परम शक्तिशाली, किंतु अधार्मिक – धर्म का अनुसरण न करने वाला, अधर्मिष्ठ–धर्म की इच्छा न रखने वाला, अधर्म का आख्यान, अनुगमन, अवलोकन, प्रसार करने वाला, अधार्मिक स्वभाव एवं आचार समन्वित, अधर्म के आधार पर ही अपनी

जीवन वृत्ति चलाने वाला था। 'मार डालो, छिन्न-भिन्न कर डालो' इस प्रकार के आदेशों का संप्रवर्तक था। उसके हाथ सदा रक्त से भरे रहते थे। वह साक्षात् पाप का अवतार था। स्वभावतः पापी, क्रोधी, क्षुद्र-विचारयुक्त, साहसी, सद्-असद् का विचार किए बिना कर्म करने में दुःसाहसी, उत्कंचन-अपराधियों और दुष्टों का प्रोत्साहक, वंचना परायण-धोखेबाज, मायावी, छली, झूठा, कपटी, शील, व्रत, गुण एवं मर्यादा रहित, प्रत्याख्यान, पौषध, उपवास से सर्वथा विहीन था। द्विपद, चतुष्पद, मृग, पशु, पक्षी एवं सरीसृपों, रेंगनेवाले जानवरों का घातक, बंधक एवं हत्यारा था। इनका घात करने में, मारने में लगा रहता था। इस प्रकार वह अधर्म का ध्वज लिए हुए था।

विश्लेषण – दशवैकालिक सूत्र की दूसरी चूलिका की प्रथम गाथा स्पष्ट कहती है- *धम्मं पि सुपुण्णाणं* - धर्म भी पुण्यशाली को ही होता है। प्रदेशी राजा के तीव्र पाप का उदय होने से अधर्म की दुष्प्रवृत्तियों से जीवन भरा हुआ था। इससे स्पष्ट ही है कि पुण्य के बढने पर ही जीव धर्म के सम्मुख होता है।

(४) रायप्पसेणीय में आगे वर्णन चलता है- चित्त सारथी की चतुराई से प्रदेशी राजा केशीकुमार श्रमण के चरणों में कैसे पहुँचा? फिर शंका और समाधान का क्रम चला - प्रदेशी राजा की दूसरी शंका में स्पष्ट है - पुण्य की उपादेयता-

एवं खलु मम अज्जए होत्था, इहेव जंबूदीवे दीवे सेयवियाए णयरीए अधम्मिए जाव सयस्स वि य णं जणवयस्स..... सुबहुं पावं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणित्ता णरएसु उववण्णो।

मम अज्जिया होत्था, इहेव सेयवियाए णयरीए धम्मिया जाव वित्तिं कप्पेमाणी समणोवासिया अभिगयजीवाजीवा० सव्वो वण्णओ जाव अप्पाणं भावेमाणी विहरइ, सा णं तुज्झं वत्तव्वयाए सुबहुं पुण्णोवचयं समज्जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववण्णा।

प्रदेशी राजा ने केशीकुमार श्रमण से पूछा- आपकी वक्तव्यता के अनुसार मेरे दादा अधार्मिक होने से घोर पाप कर्मों का अर्जन कर नरक में उत्पन्न हुए और दादी धार्मिक थी। धर्माचरणपूर्वक व्यवहार करने वाली श्रमणोपासिका, जीव-अजीव तत्त्वों की जानकार यावत् आत्मा को धर्म से अनुभावित करती हुई रहती थी। राजा ने कहा-आपके सिद्धान्त के अनुसार उसने पुण्य कर्मों का अर्जन किया एवं देवलोक में देवरूप उत्पन्न हुई।

विश्लेषण – प्रदेशी राजा की यह जिज्ञासा स्पष्ट करती है कि अधर्म से घोर पाप कर्म तथा धर्म करने से पुण्य का उपार्जन होता है।

(५) राजा प्रदेशी तो उस समय नास्तिक था, बोध रहित था, मिथ्यादृष्टि या विवेक विकल था- उसकी इस बात को प्रामाणिक नहीं कहा जा सकता, परन्तु केशीकुमार श्रमण तो सम्यग्दृष्टि थे, विवेकवान थे, मुनि थे, चतुर्ज्ञानी थे- वे क्या उत्तर देते हैं-

तव वि अज्जए होत्था, इहेव सेयवियाए णयरीए अधम्मिए जाव णो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेइ, से णं अम्हं वत्तव्वयाए सुबहुं जाव उववण्णो।

तव वि अज्जिया होत्था, इहेव सेयवियाए णयरीए धम्मिया जाव विहरइ, सा णं अम्हं वत्तव्वयाए सुबहुं पुण्णोवचयं जाव उववण्णा।

प्रदेशी ! तुम्हारे दादा इस सेयविया नगरी में कर लेकर भी प्रजापालन नहीं करते थे। हमारी वक्तव्यता के अनुसार वे अत्यन्त घोर पाप कर्मो का अर्जन कर, मृत्यु को प्राप्त कर नरक में उत्पन्न हुए हैं। और तुम्हारी दादी जो सेयविया नगरी में धार्मिक यावत् तदनुरूप आचरण शीला थी, हमारे कथन के अनुसार अत्यधिक पुण्य उपार्जित कर स्वर्गलोक में उत्पन्न हुई है।

विश्लेषण - 'पुण्णोवचयं' शब्द स्पष्ट करता है- दादी धर्मी थी, धर्म करती थी इसलिए बहुत अधिक पुण्य का संचय उसने किया। कितना स्पष्ट फरमाया मुनिराज ने- **अधर्म** पाप है एवं **धर्म**-पुण्य। अर्थात् पुण्य एवं धर्म कथंचित् पर्यायवाची भी हैं।

उत्तराध्ययन सूत्र-१३/२१ में कहा है-

इह जीविए राय! असासयम्मि, धणियं तु पुण्णाइं अकुव्वमाणो।
से सोयइ मच्चुमुहोवणीए, धम्मं अकाऊण परंसि लोए॥

यह गाथा भी यही सूचित करती है कि कर्मनिर्जरा और पुण्योपार्जन हेतु धर्म की आराधना करनी चाहिए।

सूत्रकृतांग सूत्र के प्रथम श्रुतस्कन्ध के ९ वें अध्ययन में धर्म शब्द शुभकर्म, कर्तव्य, कुशल अनुष्ठान, सुकृत, पुण्य आदि अर्थो में प्रयुक्त हुआ है। इस तरह आगमवचन स्पष्ट ही धर्म-पुण्य को पर्यायवाची भी बतला रहे हैं।

(६) आगे केशीकुमार श्रमण ने प्रदेशी राजा को कहा-

मा णं तुमं पएसी! पुव्विं रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविज्जासि जहा वणसंडे इ वा.....।

केशीकुमार श्रमण ने प्रदेशी राजा का किया विविध दृष्टान्तों से **समाधान**
असमीचीन व्यवहार के लिए क्षमा माँगने राजा का हुआ **सुप्रणिधान**
तब केशीकुमार श्रमण ने प्रदेशी को दिया हितशिक्षा का **दान**
हे प्रदेशी ! पहले रमणीय होकर बाद में मत करना अरमणीय **दुष्प्रणिधान**।

जिस प्रकार वनखण्ड जो पहले पत्र, पुष्प, हरियाली से सुशोभित एवं आभामय होने से रमणीय लगता है, जब उस वनखण्ड में पत्ते, पुष्प, हरियाली की शोभा नहीं रहती, तब वह जीर्ण, झड़े हुए, सड़े हुए पत्र-पुष्प युक्त होता है, सूखकर म्लान सा हो जाता है, अरमणीय हो जाता है। वैसे तुम पहले रमणीय होकर पश्चात् अरमणीय मत बनना।

विश्लेषण – पुण्य का उपार्जन करने वाली प्रवृत्तियों को बंद मत करना अर्थात् स्पष्ट है पुण्य का उपार्जन करते ही रहना। इस आगमपाठ के द्वारा अनुकम्पादान उपादेय माना गया है। स्पष्ट है पुण्य को बढ़ाने में अग्रगामी रहना चाहिए।

उत्तराध्ययन सूत्र के १३ वें अध्ययन में चित्त संभूति ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती से भी यही कह रहा है-*''जइ तं सि भोगे चइउं असत्तो, अज्जाइं कम्माइं करेहि राय''*

यदि तू भोगों का त्याग नहीं कर सकता तो हे राजन् ! आर्य कर्म कर। यहाँ दीक्षा नहीं, श्रावक व्रत नहीं, भोग त्याग नहीं तब आर्य कर्म क्या है? वह आर्य कर्म पुण्य ही है।

साधु द्वारा दोनों स्थलों पर पुण्य की उपादेयता की ही प्रेरणा की गई है।

(७)प्रदेशी राजा इस प्रेरणा को जीवन में उतारने हेतु किस तरह कदम बढाता है, देखते हैं इस सूत्र में-

अहं णं सेयवियाणगरी-पमुक्खाइं सत्तगामसहस्साइं चत्तारि भागे करिस्सामि, एगं भागं बलवाहणस्स दलइस्सामि, एगं भागं कोट्ठागारे छुभिस्सामि एगं भागं अंतेउरस्स दलइस्सामि, एगेणं भागेणं महइमहालयं कूडागारसालं करिस्सामि, तत्थ णं बहूहिं पुरिसेहिं दिण्णभइभत्तवेयणेहिं विउलं असणं उवक्खडावेत्ता.....?

मैं सेयविया नगरी आदि सात हजार गाँवों के चार भाग करूँगा। एक भाग सेना एवं राज्य-व्यवस्था के लिए, एक भाग कोष्ठागार के लिए सुरक्षित रखूँगा। एक भाग अन्तःपुर के लिए तथा एक भाग से एक विशाल कूटागारशाला का विशाल भवन निर्माण कराऊँगा। वहाँ दैनिक मजदूरी, भोजन तथा वेतन द्वारा अनेक व्यक्तियों को विपुल चतुर्विध आहार बनाने हेतु नियुक्त करूँगा। इस प्रकार प्रदेशी राजा ने पुण्य का वर्धापन करने हित दानशाला खुलवायी। लोक जीवन से उदासीन भाव रखते हुए वह धर्मप्रधान जीवन जीने लगा। रानी द्वारा विष-प्रयोग हुआ, पर प्रदेशी ने समाधि पूर्वक देह-त्याग कर देवगति प्राप्त की। गौतम स्वामी ने पृच्छा की- उसके पश्चात्

आयुष्य, भव एवं स्थिति क्षय होने के पश्चात् वहाँ से च्यवन कर कहाँ जायेगा? समाधान करते हुए भगवान ने कहा-

गोयमा ! महाविदेहे वासे जाणि इमाणि कुलाणि भवंति, तंजहा-अड्ढाइं दित्ताइं विउलाइं विच्छिण्णविपुलभवण-सयणासण-जाण वाहणाइं बहुधण-बहुजायरूव-रयणाइं आओगपओगसंपउत्ताइं विच्छड्डियपउरभत्तपाणाइं बहुदासी-दास-गो-महिस गवेलगप्पभूयाइं बहुजणस्स अपरिभूयाइं, तत्थ अण्णयरेसु कुलेसु पुत्तत्ताए पच्चाइस्सइ। तए णं तंसि दारगंसि गब्भगयंसि चेव समाणंसि अम्मापिउणं धम्मे दढ़ा पइण्णा भविस्सइ।(यह उववाई के समान ही है।)

हे गौतम ! महाविदेह क्षेत्र में, जहाँ आढ्य-धन-धान्य सम्पन्न, दीप्तिमय, विपुल-विस्तृत परिवार, भवन, शयन,यान, आसन, वाहन, धन स्वर्ण, रजत आदि से युक्त, क्रय-विक्रय आदि व्यापार-व्यवसाय युक्त, भोजन के बाद भी अशन-पान आदि बचा रहता हो, सेवा परिचर्या हेतु दास-दासियाँ हो, बहुत से गाय, भैंस, भेड़ आदि से युक्त बहुत से लोगों द्वारा सम्माननीय हों, उनमें से किसी एक कुल में वह जन्म लेगा। तदनन्तर जब वह शिशु रूप में गर्भ में आयेगा तब माता-पिता को सहज धर्म में दृढ़ प्रतिज्ञा होगी।

विश्लेषण- उत्तराध्ययन कहता है कि उत्तम कुल, आर्य क्षेत्र, धर्म की प्राप्ति पुण्य से होती है और सुभे नाममेगे सुभे-कल्याण कर्म बाद में भी कल्याण कराने वाला होता है। वह दृढ़प्रतिज्ञ भी अन्न आदि भोग्य पदार्थो में आसक्त, लोलुप, मोहित और संलग्न नहीं होगा और केवलज्ञान प्राप्त करेगा।

सारांश-रायप्पसेणीय के इन सूत्रों से भी अच्छी तरह ज्ञात होता है कि-

१. **पुण्य** हित करने वाला, सुख प्रदान करने वाला, क्षांति प्रदान करने वाला, मोक्षरूप फल प्रदान करने वाला है।
२. वंदन, भक्ति, सत्कार, सम्मान की भावना पुण्य से होती है।
३. धर्म पुण्य से ही होता है।
४. धर्म करने से पुण्य कर्मों का उपार्जन होता है।
५. दान पुण्य से होता है।
६. उत्तम कुल, आर्य क्षेत्र में जन्म भी पुण्य से होता है।

इस प्रकार जीव का उत्थान कराने वाला पुण्य उपादेय है, उपादेय है, उपादेय है।

युवा-स्तम्भ

अनेकान्तदृष्टि : बदले अपनी सृष्टि

श्री पदमचन्द गाँधी

भौतिकवाद की अन्धीदौड़ में अधिकांश व्यक्ति आज एकाकी जीवन व्यतीत करने के आदी हो गये हैं। एकाकी जीवन-प्रवृत्ति के कारण उनका दृष्टिकोण भी एकांगी हो गया है। आज व्यक्ति अपनी ही बात को मनवाने या थोपने के लिए अनेक तर्क-वितर्क करता है, विविध दाँवपेच खेलता है तथा वह इसी में अपनी जीत का अनुभव करता है; लेकिन जब दूसरों के द्वारा उसकी बात अस्वीकृत होती है या उसकी अनुपालना नहीं होती है तो उत्पन्न होता है- विवाद, संघर्ष, टकराव एवं मनमुटाव। यह स्थिति चाहे धर्मस्थान में हो, समाज में हो, घर-परिवार में हो या देश-विदेश में हो, सभी जगह देखने को मिलती है। व्यक्ति अपना ही पक्ष रखने हेतु या बात को मनवाने हेतु आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा शासकीय शक्तियों का प्रयोग भी करता है, क्योंकि अहंकारी प्रवृत्ति ऐसा करने के लिए बाध्य कर देती है। वह यह समझता है- 'जो मेरा है सो सत्य है।' वह अहं को जाग्रत करता है तथा संघर्षों को बढ़ाने वाला होता है, क्योंकि यह उस व्यक्ति का एकान्तवादी दृष्टिकोण होता है। एकान्तवादी आग्रह को बढ़ाता है। वह समझता है-'जो मैं कहता हूँ वही सत्य है' लेकिन अनेकान्तवाद में चिन्तन होता है- 'जो दूसरा कहता है वह भी सत्य हो सकता है।' इसे सापेक्षता का सिद्धान्त भी कहा जा सकता है।

किसी वस्तु को एक ही दृष्टिकोण से देखना गलत है। उसे यदि सभी दिशाओं से देखा जाय तो सम्पूर्ण सत्य उपलब्ध हो सकता है। एक-एक दृष्टि से देखा जाय तो मात्र आंशिक सत्य ही स्पष्ट होता है। यदि अपने मत के साथ-साथ दूसरों के मत को भी उचित स्थान दिया जाये, उसकी सापेक्षिक अच्छाइयों को स्वीकारा जाय तो संघर्ष स्वतः समाप्त हो जाते हैं, लेकिन यह तभी सम्भव है जब हम अनेकान्त दृष्टि के गुणधर्मों को समझें। यदि हम 'भी' के स्थान पर 'ही' का प्रयोग करते हैं तो निश्चित रूप से असत्य के कटघरे में खड़े हो जायेंगे तथा विवादों से घिर जायेंगे। क्योंकि 'ही' का प्रयोग अहंकारी प्रवृत्ति प्रकट करता है, जबकि 'भी' का प्रयोग सहिष्णुता एवं उदारता को स्पष्ट करता है। यही 'भी' का प्रयोग सापेक्षवाद

कहलाता है। सभी विवादों का समाधान इसी सापेक्षवाद या अनेकान्तदृष्टि में समाया हुआ है, जो विपरीत विचारधारा वालों के प्रति द्रोह करने के स्थान पर मध्यस्थभाव रखने का संदेश देता है। इसलिए इसे सहिष्णुता का सिद्धान्त भी कहते हैं।

'अनेकान्त दृष्टि' वैचारिक संकीर्णताओं को मिटाने के साथ ज्ञान की सम्भावनाओं के अनन्त द्वार खोलती है। यह विवादों, कलह एवं संघर्षों को मिटाने की एक अमृत औषधि ही नहीं वरन् वर्तमान के आतंकवाद को समता के रथ पर लाने का महान् रथ है। यदि अनेकान्त दृष्टि को व्यावहारिक जीवन के धरातल पर उतारा जाये तो समतामूलक, अहिंसामूलक और संघर्षविहीन स्वस्थ समाज की संरचना सम्भव है, जिससे परस्पर वैमनस्य और घृणा की दीवारें ध्वस्त हो सकती हैं।

अनेकान्त दृष्टि से वस्तु तत्त्व को एवं गुण धर्मों को बहुकोणीय (मल्टी एंगल) आयामों से परखा जाता है, क्योंकि अनेकान्त दृष्टि अनेकता में एकता और एकता में अनेकता को लेकर चलती है जो सभी वाद-विवादों को सुलझा देती है। यह सब कदाग्रहों तथा हठाग्रहों को दूर कर देती है। यह एक ऐसी संजीवनी है जो अभिमान तथा कदाग्रहों की व्याधियों को नष्ट कर देती है। यह वह अमृत है जो एकान्त विष को निष्प्रभावी कर देता है। यदि इसे जीवन व्यवहार में उतार लिया जाये तो अनेक समस्याओं का समाधान स्वतः हो जाता है।

भगवान् महावीर ने कहा है कि व्यक्ति जन्म से नहीं कर्म से महान् बनता है। उच्च कुलों में जन्म लेना मात्र शुभ कर्मों का संयोग है, लेकिन एक सदाचारी व्यक्ति के रूप में मरना वस्तुतः बड़ी उपलब्धि है। अतः स्पष्ट है कि विश्व में व्याप्त समस्याओं एवं विषमताओं, भय एवं त्रासदियों को अनेकान्त दृष्टि से दूर किया जा सकता है। अनेकान्त दृष्टि समत्व के जागरण में अहम् भूमिका निभाती है, इसलिए इसको तीसरा नेत्र भी कहा जाता है।

-आशिष बंगलो, हरेकृष्णा सोसायटी के सामने, मणीनगर, अहमदाबाद

जिनवाणी का ई-मेल पता

जिनवाणी के लेखक एवं पाठक अपनी रचनाएँ एवं प्रतिक्रियाएँ जिनवाणी के ई-मेल पर भी भेज सकते है। ई-मेल पता है- **jinvani@yahoo.co.in**

विशिष्ट प्रश्नोत्तर

उपासकदशांग सूत्र से पायें तात्त्विक बोध (९)

प्रश्न१६. उपभोग-परिभोग के २६ बोलों के क्रम के पीछे क्या रहस्य है?

उत्तर- इन २६ बोलों में जो क्रम रखा गया है, उस क्रम में एक धार्मिक और सात्त्विक जीवन जीने वाले, विवेकवान श्रेय साधक की दिवस-चर्या का वर्णन है। साधक दो प्रकार के कहे गये हैं- एक श्रेय साधक, दूसरा प्रेय-साधक। जो स्थूल लाभ से ऊपर उठकर भौतिक आकर्षणों के मोह-जाल को तोड़कर आत्म-हित की दृष्टि से क्रियारत हैं, वे श्रेय श्रावक हैं। जो आत्म-हित को समझे बिना इन्द्रियों के आकर्षण में उलझकर, इन्द्रियों की तृप्ति के लिए ही क्रियाशील हैं, वे प्रेय साधक हैं। यों तो अपने कल्याण की कामना दोनों करते हैं, किंतु प्रेय-साधक की कल्याण की कामना अति संकुचित होती है। श्रेय साधक की वृत्ति इससे विपरीत होती है। वे 'श्रेय' अर्थात् आत्म-हित को ही प्रधान मानते हैं, वे श्रेय के लिए इस-लोक के सुखों को त्यागने में तत्पर रहते हैं। उनकी दृष्टि में *'जे आवट्टे से गुणे, जे गुणे से आवट्टे'* अर्थात् जो संसार है, वह गुण अर्थात् शब्द,रूप, गंध, रस, स्पर्शयुक्त है, और जो शब्दादि गुण हैं वह ही संसार है। जिससे आत्म-गुणों पर आँच आये, ऐसे संसार के ऐन्द्रियक सुखों को त्यागने में श्रेय-साधक समुत्सुक रहते हैं। इन २६ बोलों में श्रेय-साधक हेतु मर्यादित/ संमयित दिवस-चर्या का आलेखन किया गया है। १ से ११ बोल बाह्य परिभोग के हैं- इन ११ बोलों में शरीर की बाह्य शोभा /विभूषा/शृंगार आदि के लिए काम आने वाले साधनों का मापन किया गया है। पश्चात् के १० बोल, १२ से २१ तक के बोल आभ्यंतर के उपभोग अर्थात् खाने-पीने से सम्बन्धित हैं। २२ व २३वें बोल में व्यापार के लिए जाते समय काम में आने वाले वाहन तथा पैरों में पहनने योग्य चप्पल व जूतों की मर्यादा बताई है। २४ वें बोल में शयन की मर्यादा है, अर्थात् इस बोल में व्यापार से श्रमित बने शरीर को विश्राम देने के लिए पलंग,खाट, पट्टा आदि की आवश्यकता होती है।

अतः इसकी मर्यादा की गई है तथा अन्त के २५ वें एवं २६वें बोल में शयन पर बैठे हुए साधक के दिवस भर में लगे हुए सचित्त पदार्थ एवं द्रव्यों का चिंतन है। श्रमण-वर्ग के लिए जिस तरह रात्रि के प्रथम व अंतिम प्रहर में-दशवैकालिक सूत्र की दूसरी चूलिका की १२ वीं गाथा में बताया 'कि मे कडं.....समायरामि।'' अर्थात् मैंने क्या किया? क्या नहीं किया? जो करने योग्य था, इस तरह का दिवस भर का चिंतन करना होता है। ठीक इसी तरह श्रावक भी इन दो बोलों के माध्यम से दिन भर में लगे सचित्त पदार्थ एवं अन्य सभी द्रव्यों का चिन्तन करता है, ऐसा इन दो बोलों से प्रतीत होता है।

निद्रा से निवृत होकर श्रावक सर्वप्रथम आवश्यक कार्यों के लिए प्रवृत्त होता है। पानी से हाथ-पैर आदि स्वच्छ करने के पश्चात् गीले हाथों को पोंछने के लिए 'उल्लणियाविहि' की मर्यादा करता है। तत्पश्चात् दंत-प्रक्षालन के लिए प्रवृत होता है। अतः दंत-प्रक्षालन के पूर्व दंत-शोधन की मर्यादा करता है। बालों तथा शरीर की शोभा बढ़ाने के लिए 'फलविहि, अब्भंगणविहि, उवट्टणविहि' की मर्यादा करता है। तदनन्तर वह स्नान के लिए तत्पर होता है। अतः स्नान करने के पहले वह स्नान के पानी की मर्यादा करता है। स्नान के पश्चात् कपड़े पहनेगा, अतः पहले ही कपड़ों की मर्यादा कर लेता है। वस्त्र-धारण के पश्चात् शोभा के लिए सुगंधित द्रव्यों को प्रयुक्त किया जाता है अतः विलेवणविहि की मर्यादा करता है। प्राचीनकाल में फूल तथा अलंकार शरीर पर धारण करने की परम्परा थी अतः 'पुप्फविहि' और 'आभरणविहि' की मर्यादा करता है। सुसज्जित होने के पश्चात् वह लौकिक कार्य करता है, अतः उन कार्यो में लगने वाले साधन, चन्दन/ अगरबत्ती/ कपूरादि की मर्यादा करता है। बाह्य कार्यों से निपटकर वह आभ्यन्तर उपयोग के लिए प्रवृत्त होता है। सर्वप्रथम चाय/दूध लेगा, पश्चात् नाश्ता करेगा, अतः 'पेज्जविहि' और 'भक्खणविहि' की मर्यादा करता है।

(क्रमशः)

Surana & Surana International Attorneys
Ahmedabad • Bangalore • Cochin
• Coimbatore • Hyderabad • Jaipur
• Jodhpur • Kolkata • Mumbai
• New Delhi • Pune • Raipur

International Law Center
224,NSC Bose Road, Chennai-600001
Tel +91-44-25381616, 42088889
E-mail :intellect@lawindia.com

दि. १.४.०८

जिनवाणी के सम्पादक आदरणीय प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन,

सादर जय जिनेन्द्र!

जिनवाणी मार्च अंक में श्रीमान् सुमेरसिंह जी बोथरा द्वारा लिखा अनुरोध 'प्यास बुझाए, कर्म घटाये, फिर क्यों न अपनाएँ धोवन पानी' पढ़कर अच्छा लगा।

हमारे सौभाग्य से २००५ में पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का उनके संत मण्डल सहित चेन्नई में पदार्पण हुआ। पूज्य श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. ने एक दिन कच्चा पानी नहीं पीने का तथा धोवन पानी पीने का वैज्ञानिक एवं धार्मिक महत्त्व समझाया। बात समझ में आने जैसी ही थी, आ गयी।

हमारे परिवार के सब सदस्यों ने बैठकर बातचीत की तथा एकमत होकर निर्णय लिया कि घर के अन्दर पीने के लिये धोवन पानी ही रहेगा, कच्चा पानी नहीं। पिछले चार वर्षों से घर में सब धोवन पानी ही पीते हैं, छोटे-छोटे बच्चे भी। मेहमानों को भी धोवन पानी ही पिलाते हैं।

स्वास्थ्य तथा धार्मिक दोनों दृष्टियों से धोवन पानी पीना उत्तम है। वैज्ञानिक एवं डॉक्टर इसको बैक्टीरिया रहित पानी मानते हैं। हमने महसूस किया कि जब से धोवन पानी पीना शुरू किया है तबसे हमारा स्वास्थ्य ज्यादा ठीक रहने लगा है।

जब हम परिवार के सारे सदस्य घर में धोवन पानी ही पीते हैं तो घर में हर समय धोवन पानी ही पीने के लिये मिलता है। इसलिये जब भी कोई साधु-साध्वी पधारते हैं तो उन्हें धोवन पानी बहराकर सुपात्र दान का उत्कृष्ट लाभ हमें सहज में मिल जाता है। हमारा मन बड़ा हर्षित होता है कि हम भी साधु-साध्वियों के निर्दोष संयम पालन करने में थोड़े-बहुत सहयोगी बन पाते हैं। नियमित धोवन पानी पीने में फायदा ही फायदा है, नुकसान कुछ नहीं।

धोवन पानी पीओ-स्वस्थ जीवन जीओ।
धोवन पानी पीओ-धार्मिक जीवन जीओ।।

शुभकामनाओं के साथ....

जिनवाणी के पाठकगण

पी.एस. सुराना
लीलावती सुराना
विनोद सुराना, रश्मि सुराना

पूज्य कुशलगणी की जय

।। श्री महावीराय नमः ।।
।। जय गुरू हस्ती ।।

श्री कुशलरत्न गजेन्द्रगणिभ्यो नमः

परमश्रद्धेय जैनाचार्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म. सा. के सुशिष्य
आचार्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्रजी म. सा. एवं उपाध्याय श्री मानचन्द्रजी म. सा. की जय

श्री श्वे. स्था. जैन चतुर्विध संघ के हितार्थ प्रमुख मुनियों द्वारा स्वीकृत

पाक्षिक पत्र विक्रम सम्वत् २०६५

वीर सम्वत् २५३४-३५ (निर्णय सागर पंचाग से सम्पादित) सन् २००८-२००९

क्र. सं.	मास-पक्ष	तिथिवार	पक्खी दिनांक	घड़ी पल	क्षय तिथि	वृद्धि तिथि	रोहिणी नक्षत्र	पुष्य नक्षत्र
१	चैत्र सुदि	१४ शनि	१६.४.२००८	१६.४३	१	–	५ गुरू	६ सोम
२	वैशाख वदि	१४ रवि	४.५.२००८	३८.४५	१२	७	–	–
३	वैशाख सुदि	प्र.१५ सोम	१६.५.२००८	६०.००	४	१५	२ बुध.	७ रवि
४	ज्येष्ठ वदि	३० मंगल	३.६.२००८	४७.४०	१४	–	–	–
५	ज्येष्ठ सुदि	१५ बुध	१८.६.२००८	४२.५५	–	–	१ बुध.	४ शनि
६	आषाढ़ वदि	१४ बुध	२.७.२००८	१३.४०	८	५	१३ मंगल	–
७	आषाढ़ सुदि	१४ गुरू	१७.७.२००८	१४.३५	१	१२	–	३ शनि
८	श्रावण वदि	३० शुक्र	१.८.२००८	२४.००	११	–	१० सोम	३०शुक्र
९	श्रावण सुदि	१५ शनि	१६.८.२००८	५१.१८	–	–	–	–
१०	भाद्रपद वदि	३० शनि	३०.८.२००८	४७.४८	१३	–	९ सोम	१२गुरू
११	भाद्रपद सुदि	१४ रवि	१४.९.२००८	३३.०८	–	८	–	–

विशेष विवरण

-आयंबिल ओली प्रारम्भ चैत्र सुदि ७ शनिवार १२.४.२००८।
-भगवान महावीर जन्म कल्याणक चैत्र सुदि १३ शुक्रवार १८.४.२००८।
-आयंबिल ओली पूर्ण चैत्र सुदि १५ रविवार २०.४.२००८।
-अक्षय तृतीया वैशाख सुदि ३ गुरुवार ८.५.२००८।
-आचार्य भगवन्त पूज्य गुरूदेव १००८ श्री हस्तीमलजी म. सा. की १७वीं पुण्य तिथि वैशाख सुदि ८ सोमवार १२.५.२००८ ।
-भगवान महावीर केवल कल्याणक वैशाख सुदि १० बुधवार १४.५.२००८ ।
-संघ स्थापना दिवस वैशाख सुदि ११ गुरूवार १५.५.२००८ ।
-आचार्य प्रवर १००८ श्री हीराचन्द्रजी म. सा. का १८वां आचार्य पद दिवस ज्येष्ठ वदि ५ रविवार ता. २५.५.२००८ ।
-परम्परा के मूल पुरूष पूज्य श्री कुशल चन्द्रजी म. सा. की २२५वीं पुण्य तिथि ज्येष्ठ वदि ६ सोमवार दि. २६.५.२००८ ।
-क्रियोद्धारक पूज्य आचार्य श्रीरतन चन्द जी म. सा. की १६३वीं पुण्य तिथि ज्येष्ठ सुदि १४ मंगलवार १७.६.२००८ ।
-२१२वाँ क्रियोद्धारक दिवस आषाढ़ वदि २ शुक्रवार २०.६.२००८।
-आद्रा नक्षत्र प्रारम्भः आषाढ़ वदि ३ शनिवार २१.६.२००८
इसके पश्चात्गाज-बीज होने पर सूत्र की, असज्झाय नहीं रहेगी ।
-चातुर्मास प्रारम्भ (चातुर्मासी पक्खी) आषाढ़ सुदि १४ गुरुवार १७.७.२००८ ।

श्री महावीराय नमः

जय गुरु हीरा श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः जय गुरु मान

महानगर मुम्बई (महाराष्ट्र) में

जैन भागवती दीक्षा महोत्सव

आदरणीय धर्मप्रेमी बन्धुवर,

सादर जय जिनेन्द्र!

आपको सूचित करते हुए परम प्रसन्नता है कि **परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के मुखारविन्द से एवं परम श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पं. रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. की मंगल मनीषा से तथा साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. की नेश्रायवर्तिनी महासती श्री चारित्रलता जी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा., सेवाभावी महासती श्री विमलेशप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा के पावन सान्निध्य में**

विरक्ता बहिन सुश्री डिम्पल सालेचा

विरक्ता बहिन सुश्री रितू जैन

विरक्ता बहिन सुश्री भावना बागरेचा

की भागवती दीक्षा

वि.सं. २०६५ वैशाख शुक्ला २, बुधवार, दिनांक ७ मई २००८ को

अग्राङ्कित कार्यक्रमानुसार सम्पन्न होंगी।

आपसे विनम्र अनुरोध है कि दीक्षा महोत्सव के पावन-पुनीत प्रसंग पर व्रत-नियमयुक्त श्रद्धा समर्पण के साथ जैन भागवती दीक्षा की अनुमोदना का लाभ प्राप्त करें।

दीक्षा स्थल

ऋतम्बरा कॉलेज, एन.ए. आहुजा मार्ग, जे.वी.पी.डी. स्कीम, आई. एम. ए. हॉल के सामने, चन्दन सिनेमा के पीछे, विले पार्ले (पश्चिम), मुम्बई

आयोजक

श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मुम्बई

एवं

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

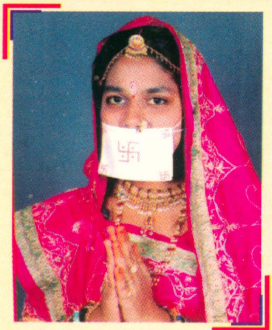

विरक्ता बहिन

सुश्री डिम्पल सालेचा : परिचय

जन्मतिथि– ४ मई १९८६

जन्मस्थान– कल्याणपुर (जिला–बाड़मेर)

निवास स्थान–जेठन्तरी(हालमुकाम–हुबली,कर्ना.)

व्यावहारिक शिक्षा– पी.यू.सी. द्वितीय वर्ष

पिता–माता : श्री उत्सवराजजी–श्रीमती शोभादेवी जी सालेचा, हुबली

धार्मिक अध्ययन

आगम कण्ठस्थ : दशवैकालिक, उत्तराध्ययन सूत्र, नन्दीसूत्र, सुखविपाक, अनुत्तरोववाइय, आचारांग, वृहत्कल्पसूत्र, पुप्फचूलिया सूत्र, कप्पवडंसिया सूत्र, व्यवहार सूत्र, निशीथ सूत्र, पुच्छिस्सुणं, उववाई सूत्र की २२ गाथा, तत्त्वार्थ सूत्र।

स्तोक कण्ठस्थ : २५ बोल, ६७ बोल, ३३ बोल, समिति-गुप्ति, संज्ञा, कर्मप्रकृति, उपयोग, लघुदण्डक, जीवधड़ा, पाँच देव, जयंतीबाई के प्रश्न, ९८ बोल, ३२ बोल, १०२ बोल का बासठिया, नवतत्त्व, २५ क्रिया, ४७ बोल की बंधी, ५० बोल की बंधी, ८०० बोल की बंधी, गुणस्थान स्वरूप, गति-आगति, छोटी गतागत, आबाधाकाल, ज्ञानलब्धि, इन्द्रियपद, रूपी-अरूपी, विरह द्वार, असंयती भव्यद्रव्य, तीन जागरणा, प्रत्यनीक, श्वासोच्छ्वास आदि।

आगम वाचनी : अन्तकृद्दशांग, दशवैकालिक सूत्र, समवायांग सूत्र।

स्तोत्र : भक्तामर, कल्याणमन्दिर, महावीराष्टक, चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्तोत्र, प्रार्थना पंचविशति आदि।

अन्य : श्री जैन रत्न आ. शिक्षण बोर्ड की प्रथम से चतुर्थ कक्षा उत्तीर्ण।

वैराग्यावधि : चार वर्ष

विरक्ता बहिन

सुश्री रिंकू जैन : परिचय

जन्मतिथि– २३ मई १९८६

जन्मस्थान– अलवर (राज.)

निवास स्थान–बड़ौदाकान (अलवर)

व्यावहारिक शिक्षा– बी.ए.

पिता–माता : श्री राजेन्द्रकुमार जी–श्रीमती हेमलता जी जैन, बड़ौदाकान

धार्मिक अध्ययन

आगम कण्ठस्थ : दशवैकालिक सूत्र, सुखविपाक सूत्र, अनुत्तरोववाइय सूत्र, नन्दीसूत्र, उत्तराध्ययन सूत्र १ से २५ अध्ययन, वीर स्तुति।

स्तोक कण्ठस्थ : २५ बोल, ६७ बोल, ४७ बोल, ५० बोल, ८०० बोलों की बंधी, समवशरण, आठ द्रव्येन्द्रिय, पदवीं, गुणस्थान स्वरूप, गम्मा, ज्ञान लब्धि, जीव पर्याय, अजीव पर्याय, जीवधड़ा, लघुदण्डक, कर्मप्रकृति, १०२ बोल का बासठिया, ९८ बोल का बासठिया, ३३ बोल, समिति-गुप्ति, कायस्थिति, गति-आगति, कर्मग्रन्थ १ से ३ व ५वाँ।

आगम वाचनी : अन्तकृद्दशांग, कल्पसूत्र, सूत्रकृतांग सूत्र।

स्तोत्र : भक्तामर, कल्याणमन्दिर, महावीराष्टक, चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्तोत्र, तत्त्वार्थ सूत्र १ से ३ अध्ययन।

अन्य : श्री जैन रत्न आ. शिक्षण बोर्ड की प्रथम से षष्ठ कक्षा उत्तीर्ण।

वैराग्यावधि : तीन वर्ष

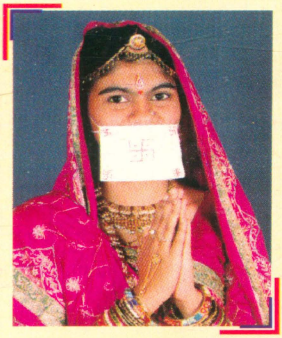

विरक्ता बहिन

सुश्री भावना बागरेचा : परिचय

जन्मतिथि– ३ सितम्बर १९८७

जन्मस्थान– कनाना (जिला–बाड़मेर) राज.

निवास स्थान–हैदराबाद (आ.प्र.)

व्यावहारिक शिक्षा– बी.कॉम. प्रथम वर्ष

पिता–माता : श्री शांतिलाल जी–श्रीमती कमलादेवी जी बागरेचा–हैदराबाद

धार्मिक अध्ययन

आगम कण्ठस्थ : दशवैकालिक, उत्तराध्ययन सूत्र- १,३,४,९,१०,११, पुच्छिस्सुणं, तत्त्वार्थ सूत्र १-४ अध्ययन।

स्तोक कण्ठस्थ : २५ बोल, ६७ बोल, समिति-गुप्ति, गति-आगति, ३३ बोल, लघुदण्डक, तीनों बंधी, ८४ लाख जीवयोनि, संयता,दूसरा कर्मग्रन्थ, इन्द्रियपद, ज्ञानलब्धि, कर्मप्रकृति, जीवपज्जवा, समवसरण, आबाधाकाल, गुणस्थान स्वरूप, ९८ बोल का बासठिया, नवतत्त्व, कायस्थिति, गम्मा, दिशाणुवाय, भाषा पद, जीवधड़ा, रूपी-अरूपी, श्वासोच्छ्वास, योनि द्वार, विरह द्वार, पाँच देव, २५ क्रिया, छोटी गतागत, उपयोग, संज्ञा, जयंतीबाई के प्रश्न आदि।

आगम वाचनी : अन्तकृद्दशांग, कल्पसूत्र, नन्दीसूत्र।

स्तोत्र : भक्तामर, महावीराष्टक।

अन्य : श्री जैन रत्न आ. शिक्षण बोर्ड की प्रथम से षष्ठ कक्षा उत्तीर्ण।

वैराग्यावधि : डेढ़ वर्ष

दीक्षा महोत्सव कार्यक्रम

वि.सं. २०६७ वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, मंगलवार, ६ मई २००८

शोभायात्रा : प्रातः ८.३० बजे वीर परिवार के निवास स्थान से प्रस्थान। प्रमुख मार्गों से होते हुए विले पार्ले (पश्चिम) स्थित ऋतम्बरा कॉलेज पहुँचकर परमपूज्य आचार्यप्रवर के मुखारविन्द से मंगलपाठ श्रवण।

अभिनन्दन समारोह : मध्याह्न ०२.३० बजे से
स्थान-ऋतम्बरा कॉलेज, विले पार्ले (पश्चिम), मुम्बई

वि.सं. २०६७ वैशाख शुक्ला द्वितीया, बुधवार, ७ मई २००८

अभिनिष्क्रमण यात्रा : प्रातः७.०० बजे वीर परिवार के निवास स्थान से ऋतम्बरा कॉलेज स्थित दीक्षा स्थल के लिए प्रस्थान। तदनन्तर परम पूज्य आचार्यप्रवर प्रभृति संत-सतीवृन्द के पावन सान्निध्य में दीक्षा महोत्सव कार्यक्रम।

दीक्षा पाठ : प्रातः ९.३० बजे लगभग
परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के मुखारविन्द से।

विनीत

पारसचन्द हीरावत-अध्यक्ष **नरेन्द्र हीरावत**-मंत्री

श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मुम्बई

सुमेरसिंह बोथरा-अध्यक्ष, **ज्ञानेन्द्र बाफना**-कार्याध्यक्ष, **नवरतन डागा**-महामंत्री

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

निवेदक

उत्सवराज सालेचा, हुबली(कर्नाटक), **राजेन्द्र कुमार जैन**, बड़ौदाकान(अलवर), **शान्तिलाल बागरेचा**, हैदराबाद(आन्ध्रा)

सम्पर्क सूत्र-मुम्बई-श्री पारसचन्द जी हीरावत, ०२२-२३६३०३२०, २३६७६५८१, ०९८२१०१३५३०, श्री नरेन्द्र जी हीरावत, ०२२-२४३७०७१३, २४२२२०२५, ०९८२१०४०८९९, **जोधपुर**-०२९१-२६३६७६३, २६४१४४५

१२	आश्विन वदि	३० सोम	२६.६.२००८	१७.५३	५	–	७ रवि	११ गुरू	-पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म. सा. का ८२वा पुण्यातिथ श्रावण वदि ३० शुक्रवार १.६.२००८ ।
१३	आश्विन सुदि	१५ मंगल	१४.१०.२००८	४७.१०	१३	१०	–	–	-पर्युषण महापर्व प्रारंभ भाद्रपद वदि १२ गुरूवार २८.८.२००८ ।
१४	कार्तिक वदि	३० मंगल	२८.१०.२००८	५४.५०	७	–	४ शनि	६ बुध	-संवत्सरी महापर्व भाद्रपद सुदि ५ गुरूवार ४.६.२००८ ।
१५	कार्तिक सुदि	१४ बुध	१२.११.२००८	२०.३५	–	२	–	–	-आर्यबिल ओली प्रारम्भ, आसोज सुदि ७ सोमवार ६.१०.२००८ ।
१६	मार्गशीर्ष वदि	३० गुरू	२७.११.२००८	३८.१०	२	–	–	६ मंगल	-पूज्य आचार्य श्री भूधरजी म. सा. की पुण्य तिथि आसोज सुदि प्र. १० गुरूवार ६.१०.२००८ ।
१७	मार्गशीर्ष सुदि	१५ शुक्र	१२.१२.२००८	३६.५८	१३	४	१५ शुक्र	–	-आर्यबिल ओली पूर्ण आसोज सुदि १५ मंगलवार १४.१०.२००८ ।
१८	पौष्ण वदि	३० शनि	२७.१२.२००८	२६.००	५	११	–	–	-स्वाति नक्षत्र प्रारम्भः इसके पश्चात् गाजबीज होने पर सूत्र की असज्झाय रहेगी, कार्तिक वदि १० गुरुवार २३.१०.२००८ ।
१९	पौष सुदि	१४ शनि	१०.१.२००९	१२.४५	–	–	१२ गुरू	–	-भगवान महावीर निर्वाण कल्याणक कार्तिक वदि ३० मंगलवार २८.१०.२००८ ।
२०	माघ वदि	१४ रवि	२५.१.२००९	९.१०	१	१३	–	२ सोम	-वीर संवत् २५३५ प्रारम्भ एवं गौतम प्रतिपदा कार्तिक सुदि १ बुधवार २९.१०.२००८ ।
२१	माघ सुदि	१५ सोम	९.२.२००९	३२.२०	१२	–	१० गुरू	–	-ज्ञान पंचमी (सौभाग्य पंचमी) कार्तिक सुदि ५ सोमवार ३.११.२००८ ।
२२	फाल्गुन वदि	३० मंगल	२४.२.२००९	५९.४५	–	–	–	–	-आचार्य प्रवर १००८ श्री हीराचन्द्रजी म. सा. का ४६वां दीक्षा दिवस कार्तिक सुदि ६ मंगलवार ४.११.२००८ ।
२३	फाल्गुन सुदि	१४ मंगल	१०.३.२००९	७.५७	४	१	८ बुध	१२ रवि	-चातुर्मासिक पक्खी (चातुर्मास पूर्ण)कार्तिक सुदि १४ बुधवार १२.११.२००८ ।
२४	चैत्र वदि	१४ बुध	२५.३.२००९	३८.३०	१	६	–	–	-वीर लोकाशाह जयन्ती , कार्तिक सुदि १५ गुरूवार १३.११.२००८।
									-मौन एकादशी मार्गशीर्ष सुदि ११ मंगलवार ९.१२.२००८ ।
									-भगवान पार्श्वनाथ जन्म कल्याणक पौष वदि १० रविवार २१.१२.२००८ ।
									-फाल्गुनी चातुर्मासी पर्व फाल्गुन सुदि १४ मंगलवार १०.३.२००९ ।
									-भगवान आदिनाथ जन्म कल्याणक एवमूआचार्य प्रवर १००८ श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का ७१ वां जन्म दिवस चैत्र वदि ८ गुरूवार १९.३.२००९ ।

गुरू हस्ती के दो फरमान - सामायिक स्वाध्याय महान्

गुरू हीरा का यह सन्देश - व्यसन मुक्त हो सारा देश

प्रिय महानुभावो! शुद्ध चित्त से दोनों समय प्रतिक्रमण करने से निर्जरा होती है। उत्कृष्ट रसायन आने से तीर्थंकर गौत्र की उपार्जना होती है। अतः दोनो समय प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिये। यदि प्रमाद वश न हो सके तो पक्खी का तो अवश्य करना चाहिये। पांचवे आवश्यक के काउसग्ग में देवसी को ४, पक्खी को ८, चौमासी को १२, और सम्वत्सरी को २० लोगस्स का चिन्तन करना अजमेर सम्मेलन का नियम है। सामायिक स्वाध्याय का घर-घर प्रचार करें। ब्रह्मचर्य का पालन करें व व्यसनों का त्याग करें।

धोवन पानी : कुछ नारे

डॉ. दिलीप धींग

(१)

धोवन पानी का उपयोग।
रखता सबको स्वस्थ नीरोग।।

(२)

प्रासुक अचित्त जल का पान।
जैनों की है एक पहचान।।

(३)

पावन करता तन-मन-जीवन।
पीयेंगे, रखेंगे धोवन।।

(४)

धोवन से घर शुद्ध बनेगा।
श्रमणाचार विशुद्ध बनेगा।।

(५)

धोवन पीएँ और पिलाएँ।
निर्दोष जीवन अपनाएँ।।

(६)

यदि घर में होगा धोवन जल।
सन्त पदार्पण होगा सफल।।

(७)

छोटा-सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

(८)

अणुव्रत का अभ्यास है धोवन।
महाव्रती की प्यास है धोवन।।

(९)

धोवन जल का करें प्रचार।
सुदृढ़ होगा जैनाचार।।

(१०)

धोवन जल के कई आयाम।
संयम, विवेक आदि नाम।।

(११)

जल बचाएँ, जीव बचाएँ।
धोवन का उपयोग बढ़ाएँ।।

(१२)

कहते गुरुजन ज्ञानी ध्यानी।
आओ! पीएँ धोवन पानी।।

(१३)

हमने दो बातों की ठानी।
दिन में भोजन, धोवन पानी।।

(१४)

जल जीवन, जीवन का झरना।
जल का अपव्यय कभी न करना।।

उमराव सदन, ५३-बी, डोरे नगर, उदयपुर-३१३००२

नारी-स्तम्भ

मुमुक्षु बहन को पत्र.....

प्रिय बहन,

सादर जय जिनेन्द्र!

मुझे जबसे ज्ञात हुआ है कि तुमने इस मनुष्य जीवन में संसार के चक्कर में न पड़कर मोक्ष मार्ग पर चलने का निर्णय लिया है और इसके लिए संयम का मार्ग अपनाने का संकल्प किया है, तभी से मेरा मन तुमसे बहुत कुछ कहना चाहता है। मैं तुम्हारी बड़ी बहिन हूँ, मैंने गृहस्थावस्था स्वीकार करके श्रावक धर्म की साधना का निर्णय बहुत पहले ले लिया था। तभी से निरन्तर ही अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों तथा व्यस्तताओं के अलावा अधिकांश समय मैंने जिनेन्द्र भगवान् की स्तुति, स्वाध्याय, सामायिक तथा ध्यान और चिन्तन में लगाया है। तुम्हारी दीक्षा के शुभ अवसर पर मैं अपने जीवन के अनुभव एवं जिनवाणी के स्वाध्याय के परिणाम से प्राप्त कुछ बातों को तुम्हें पत्र में कहना चाहती हूँ। शायद यही पत्र इस प्रसंग पर बड़ी बहन का एक श्रेष्ठ उपहार हो सकता है।

तुम्हारी दीक्षा में अभी समय है, किन्तु उससे पूर्व तुम्हें अपना जीवन उसकी तैयारी के लिये बिताना है। अपने आप से बात करना और आत्मानन्द अनुभूति को प्राप्त करना इतना आसान नहीं होता है जितना मैं समझती हूँ। बाहर उलझी चेतना जितनी भी भीतर जाये या जाने का प्रयास करे, चुम्बक की भाँति पुनः बाह्य में ही उलझ जाती है। भौतिक आकर्षण और परिग्रह की प्रवृत्ति जिसके मूल में मोह का प्रशासन चलता है अन्दर से जुड़ने ही नहीं देती है। इसके विपरीत हम बाहर से भले ही कितने भी अनासक्त दिखें, पर भीतर से आसक्ति और परद्रव्य से फेरफार करने की कर्त्तव्य बुद्धि बनी ही रहती है।

यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि निज शुद्ध आत्मा की अनुभूति सहज साध्य है, यत्न साध्य नहीं। आत्मा की अनुभूति ही मुक्ति का प्रथम सोपान है और सुख का प्रथम उपाय है, अतः कल्याणार्थी होकर आत्मानुभव का उद्यम करना ही वर्तमान में श्रेयस्कर है। अध्ययन आदि भी उसी के लक्ष्य से करना, तत्त्व-निर्णय में उपयोग लगाना, मात्र परिभाषाएँ, श्लोक, गाथा, पाठ रट लेने मात्र से अंपने को कृतकृत्य न मान लेना, क्योंकि तत्त्व निर्णय के बिना स्वभाव एवं हित-अहित का

भेद ज्ञान नहीं होता और भेदज्ञान के बिना उपयोग बाहर ही भ्रमता रहता है। क्षणमात्र के लिये भी अन्तर्मुखी नहीं होता। बाहर यदि विकल्पों के अनुसार कार्य बन जाये तो व्यक्ति अपने को सुखी सा मान लेता है और यदि प्रतिकूलता होती है तो उसे दूर करने के लिए मिथ्या विकल्प-जाल में उजझा हुआ निरन्तर खेद-खिन्न रहता है। अतः अपना अध्ययन करते हुए भी अकेले या तत्त्वजिज्ञासुओं के साथ बैठकर विचार-विमर्श करना।

इस प्रकार प्रयोजनभूत तत्त्वों का आगम एवं युक्ति से भी भली प्रकार निर्णय करना। मात्र 'अध्ययन' करके उपाधि (डिग्री) लेने का ही लक्ष्य मत बना लेना। बाह्य प्रवृत्ति में उलझने से समय का दुरुपयोग ही होगा, अतः प्रतिक्षण सावधान रहना। बाह्य चकाचौंध में एक बार फँस जाने से निकलना कठिन होगा। अतः मात्र प्रवचन, भाषण, प्रचार-प्रसार की आसक्ति तथा पत्र-पत्रिकाओं में फोटो छपने आदि के सस्ते प्रलोभनों से भी बचना। जहाँ लोकैषणा अनन्त संसार का मूल है, वहाँ आत्मार्थता त्रैलोक्य में सर्वोत्कृष्ट जीवन-कला एवं कार्य है। वातावरण के प्रवाह में नहीं बहना, अपितु अपने लक्ष्य का निरन्तर ध्यान रखते हुए सदा उद्यमी रहना। दूसरों से विशेष अपेक्षा रखना ठीक नहीं है। सहज मिली सामग्री में सन्तोष रखते हुए, स्वरूप में सन्तुष्ट होने के लिए पुरुषार्थ करना।

अपना भला-बुरा आत्म-परिणामों से ही होता है, अतः दूसरों का दोष भी मत देखना और दीनतापूर्वक आशा भी मत रखना। खोटे परिणामों को छिपाने का नहीं मिटाने का प्रयत्न करना। तत्त्वाराधना आदि को बोझ समझकर या मात्र दूसरों को दिखाने के लिये नहीं करना, अपितु अपना हित समझकर सदैव सचेत रहना।

कुसंगति का निर्दयतापूर्वक परिहार करना, क्योंकि कुसंगति में भाव निरन्तर मलिन रहते हैं तथा दुष्प्रवृत्तियाँ स्वयमेव आ जाती हैं। आलस्य छोड़कर धैर्य एवं साहसपूर्वक जिनागम के अध्ययन एवं आत्मानुभव के लिये तुम सतत पुरुषार्थी रहो। जब लौकिक घर की याद आये तब निज घर का स्मरण करो। जब बाह्य लोगों की याद आये तब पंचपरमेष्ठी के स्वरूप, उपकारादि का विचार करो। इस प्रकार स्वयं ज्ञान से ही समस्त विकल्पों का समाधान करते हुए आत्महित में अग्रसर रहो।

शील उत्कृष्ट रत्न है और शील का पालन एवं रक्षा प्राणों की कीमत पर भी

करने योग्य है। अतः शील की नौ बाड़ों का सदा ध्यान रखनां शील के अतिचारों का त्याग करना। शील की भावनाओं को भाना। हँसी-मजाक, विकथा आदि का त्याग करना। शान्त एवं सन्तोषी रहना। सादगी को शृंगार समझना। सत्य को जीवन का आभूषण बनाना। कृत्रिमता या प्रदर्शन की भावना से धार्मिक क्रियाएँ मत करना, अपितु सहज चर्चा (विचार एवं चेष्टाएँ) इतनी पवित्र रखना जिससे अपना हित हो और जिनशासन का उपहास न हो पाये। अपना हित हो और जिनधर्म की प्रभावना हो, ऐसी प्रवृत्ति रखना।

याद रखो, बाह्य में होड़ लगाने से आत्मोत्थान नहीं, आत्मपतन ही होगा। मनुष्य पर्याय एवं जिनशासन मिलना अति दुर्लभ है, अतः अवसर नहीं चूकना।

ध्यान रखना दीक्षा लक्ष्य नहीं है वह तो साधन है। मैंने कई बार कई दीक्षार्थियों से उनका लक्ष्य पूछा है, किन्तु अधिकांश दीक्षार्थियों ने जो जवाब दिया उससे मुझे संतोष नहीं हुआ। उनमें से कई ने अपना लक्ष्य दीक्षा बतलाया, कई पारिवारिक समस्याओं से निजात पाने के लिये ऐसा कर रहे थे। कई प्रचार-प्रसार के लिये दीक्षित होना चाहते थे। उनमें से बहुत कम ऐसे थे जिन्होंने कहा कि वे आत्मानुभूति की प्राप्ति के लिये संयम का मार्ग अपना रहे है। मुझे लगता है कई लोग भावुकतावश अज्ञान में बिना किसी पूर्वाभ्यास के, बिना आगम-अभ्यास के दीक्षा लेने को आतुर हो जाते हैं। उसके परिणाम आगे जाकर ठीक नहीं रहते हैं। पूर्णता के लक्ष्य से की गयी शुरुआत ही सच्ची शुरुआत होती है। इसलिये शुद्धात्मा की अनुभूति का ही लक्ष्य होना चाहिये। कभी मान, यश, प्रशंसा में परेशान मत होना। ये मनुष्य को भटकाने वाले हैं।

मैंने तुम्हें बड़ी बहिन होने के नाते कुछ बातें कही हैं। कटु लगे तो उसके लिये मुझे क्षमा कर देना, क्योंकि यह लिखने के लिये भी मुझे साधर्मिक वात्सल्य भावना ने ही बाध्य किया है। हम सभी चाहें तो उस अज्ञात सहज तत्त्व का अनुष्ठान करके सतत प्रसन्न रह सकते हैं। तुम्हारी अन्दर की मजबूती के लिये आत्मविश्वास स्तुत्य है। सबकुछ छोड़ना पर टूटना नहीं, भगवान् बन जाओगी।

तुम्हारी बड़ी बहिन
रुचि जैन
उपनिदेशक, जिन फाउण्डेशन
३६, वार्ड नं. १, मेहरौली, नई दिल्ली-११००३०

धारावाहिक (क्रमशः४७)

जम्बूकुमार

जैनदिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.

पूर्ववृत्तः- एक दिन विवेकी एवं दूरदर्शी राजा ने सोचा कि क्यों न युवराज के मित्रों की परीक्षा की जाए। इस विचार से उन्होंने प्रातः होते ही युवराज को फाँसी की सजा सुना दी। इधर युवराज दिन-रात साथ रहने वाले अपने मित्र से संकटकाल में साथ देने के लिए कहता है, किन्तु मित्र बहाना बनाकर वहाँ से भाग छूटता है। फिर युवराज दूसरे मित्र से मिलता है।

दूसरा मित्र सदा ही दिन में युवराज के पास रहता था और संध्या होते ही घर चला जाता था। उसने सोचा-"मैं तो दिन-दिन का मित्र हूँ। दिन भर साथ रहूँगा और रात होते ही चलता बनूँगा। जब रात-दिन का मित्र ही युवराज का साथ छोड़ गया तो मेरी जान फालतू थोड़े ही है। ऐसा सोचकर वह संध्या समय तक युवराज के पास बना रहा। कुछ भी न सूझ पड़ा। आखिर राजा के निर्णय के आगे किसी की क्या चल सकती थी? अन्त में सूर्य अस्ताचल पर जा पहुँचा और वह भी घर जा पहुँचने के लिए युवराज से आज्ञा माँगने लगा। वह बोला-"युवराज अत्यन्त अफसोस है कि मैं बहुत कुछ सोच-विचार कर भी आपको बचाने का कोई उपाय न निकाल सका। क्या करूँ,असमर्थ हूँ। संध्या हो गई है। मेरे जाने का समय हो चुका है। आज्ञा दीजिए, चलूँ।"

युवराज बोले-" मित्र ! हमेशा रहने वाला मित्र लौटकर नहीं आया है, तुम भी जाना चाहते हो, जिंदगी की यह अन्तिम रात्रि है। इसे शान्ति के साथ बिताने की अभिलाषा भी पूर्ण नहीं हो रही है। तुम रहते तो बातचीत में समय निकल जाता। मन लगा रहता। क्या तुम किसी प्रकार यहाँ नहीं ठहर सकते?"

मित्र-" नहीं युवराज, क्षमा चाहता हूँ। मेरा ठहरने का समय पूरा हो गया है। अब मुझे जाना ही पड़ेगा। मेरे घर पहुँचे बिना मेरी माँ रोटी नहीं खाती। लाचार हूँ।"

इतना कह कर दूसरा मित्र भी युवराज को मौत के मुँह में पड़ा छोड़ कर

अपने रास्ते चल दिया।

युवराज अब अकेला रह गया। प्रातःकाल होते ही उसे यमराज का अतिथि बनना होगा, यह विचार उसे भयंकर प्रतीत हो रहा था। उसने सोचा–अभी सारी रात्रि बीच में है। तब तक मित्रों से मिल कर आत्मरक्षा का उपाय कर लेना उचित है। संभव है किसी उपाय से प्राण बच जाएं। ऐसा विचार कर वह रात्रि के अन्धकार में राजमहल से निकल कर चल दिया। पहले युवराज ने पुनः पहले मित्र के घर जाना उचित समझा। वहाँ पहुँचा और मित्र का दरवाजा खटखटाया।

खटखट का शब्द सुनकर युवराज का मित्र ऊपर से बोला कौन है ?

युवराज– "मैं हूँ युवराज। तुम्हारा अभिन्न हृदय मित्र। किवाड़ खोलो तो बातचीत करूँ।"

मित्र– 'कहिए आप इस समय कैसे पधारे हैं।'

युवराज– "मित्र, तुम अनजाने–से बनकर बातें कर रहे हो। तुम्हें मालूम है कि मुझे प्राणदण्ड मिला है। महाराज ने यह भी आज्ञा दी है कि जो मेरी मदद करेगा उसे भी प्राणदण्ड मिलेगा। ऐसी मुसीबत के समय तुम्हें खतरे में डालना यद्यपि उचित न था, मगर तुम्हारे सिवाय मेरा और कोई सहायक नहीं है। मैंने अपने जीवन में तुम्हें ही अपना मित्र बनाया है। अतएव तुम्हारे पास आया हूँ। भाई, कोई उपाय सोचो। किसी प्रकार सहायता करो, जिससे राज्य गया भाड़ में, प्राण तो बच जाएं।"

मित्र– "युवराज, तुम यदि मेरे सच्चे मित्र होते तो मेरे प्राणों को विपत्ति में डालने के लिए कदापि मेरे पास न आते। जब तुम्हारी सहायता करने वाले को भी फाँसी मिलने की महाराज की आज्ञा है तो तुम मुझे अपना साथी बनाने आए हो! यदि किसी प्रकार महाराज को तुम्हारे यहाँ आने का समाचार मिल गया तो मेरी भी जान जाएगी। तुम मेरे मित्र बनते हो और मेरे प्राणों के प्यासे भी हो। ऐसी मित्रता तो दुनिया में अनोखी चीज है। भाई, दया करो मुझ पर ! मैं गरीब आदमी ठहरा। तुम जैसे बड़ों के साथ मेरी कैसी मित्रता। उल्टे पांव यहाँ से, अभी इसी समय विदा हो जाइए। बाज आएं ऐसी मित्रता से।"

युवराज– "आज विपत्ति आते ही एक दम बदल गए? मैं अभी लौट जाऊँगा। द्वार तो खोलो जरा। गाढे समय में ही मित्रता काम आती हैं।"

मित्र– ''युवराज, कह दिया एक बार। जाओ, हटो यहाँ से। निर्लज्जता की भी सीमा होती है ! मरना है तो मरो। अपने पापों का फल आप ही भोगो। मुझे क्यों लपेटने का प्रयत्न करते हो। मैं इस समय तुम्हारी कुछ भी सहायता नहीं कर सकता। जल्दी जाओ, भागो। एक क्षण भी यहाँ ठहरे तो ऊपर से पत्थर मार दूँगा।''

युवराज ने अपने मित्र की बात सुनी तो वह स्तब्ध रह गया। जो व्यक्ति रात-दिन चरण चूमता रहता था, आज वही पत्थर मारने को तैयार है। जो गुलामी करते-करते अघाता न था आज वह अपने घर में घुसने तक नहीं देता। जो कल तक मेरे वाक्यों को अमृत के समान मधुर कहता था आज वह मेरी प्रार्थना को भी नहीं सुनता। 'दैवी विचित्रा गतिः' भाग्य की गति सचमुच बड़ी विचित्र है।

इसी प्रकार सोचता-विचारता राजकुमार दूसरे मित्र के पास गया। वहाँ जाकर बोला-''बन्धुवर ! आज मेरे ऊपर विपदाओं का पहाड़ टूट पड़ा है। तुम सब बातें जानते हो। ऐसी घोर विपत्ति के समय मित्रों के अतिरिक्त और कौन सहायता कर सकता है? यही सोचकर तुम्हारे पास आया हूँ। हो सके तो कुछ करो और मेरे प्राण बचाओ।''

दूसरा मित्र राजकुमार को आया देख नीचे उतरा। किवाड़ खोलकर बोला- ''राजकुमार! मैं बड़ा नमकहराम हूँ कि इस समय आपकी कुछ भी सहायता नहीं कर सकता। खेद है कि मैं सहायता करने में अपने को सर्वथा असमर्थ पाता हूँ। आखिर कोई उपाय भी तो नहीं नजर आता। महाराज के सामने बडों-बडों की नहीं चली तो मैं किस खेत का बथुआ हूँ। मेरी कौन सुनेगा? हाँ, एक उपाय है। मैं अपना तेज चाल वाला एक घोड़ा आपको दे सकता हूँ। साथ में कुछ मोहरें रख दूँगा। आप घोड़े पर सवार होकर किसी तरफ चल दीजिए। संभव है, आपकी जान बच जाए।

युवराज– ''राजा के बडे लम्बे हाथ हैं। भाग कर कोई बच नहीं सकता। वह कहीं से पकड़ा कर मंगवा लेंगे और तब अधिक दुर्गति होगी। इस उपाय से प्राण बचने की कोई संभावना नहीं है। आपने घोड़ा देने की उदारता प्रदर्शित की इसके लिए अनेक धन्यवाद। पर अब मेरे जीवन की रक्षा नहीं हो सकती। प्रातः काल मैं परलोक को प्रयाण करूँगा।''

(क्रमशः)

उपन्यास (६)

भाई-बहन

उपाध्याय श्री केवलमुनि जी म.सा.

पूर्ववृत्तः- एक दिन निर्मला और सोमदत्त ने घने वन में उछाले मारते, चौकड़ियाँ भरते, कूदते, फाँदते, हरिणों के समूह को शेर की दहाड़ सुनकर भागते देखा तो वे भी भयभीत होकर जामुन के पेड़ पर चढ़ गये, उस पेड़ से उतरकर थोड़ी दूर चलकर वे वटवृक्ष के नीचे बैठ गए, घोड़े की टापों की आवाजं सुनकर वे दोनों सहम गए एवं वृक्ष की घनी डालियों में छिप गए। घुड़सवार वहाँ आया, उसी पेड़ के नीचे अपना मुकुट रखकर विश्राम करने लगा। मुकुट की चमक को देखकर भाई का मन ललचा गया तो उसकी इच्छा पूरी करने के लिए निर्मला चुपके से नीचे उतरी। उसके पैर जमीन पर टिकने से पहले ही राजा जाग गया। मुग्ध राजा ने उसे अनाथ जानकर घोड़े पर बिठाया एवं राजधानी की ओर रवाना हो गया। ऐसी स्थिति में.....

निर्मला एकदम हतप्रभ रह गई। उसे स्वप्न में भी ऐसी आशा न थी। उसने कहा-" महाराज ! मेरा एक छोटा भाई है। वह उसी पेड़ पर बैठा है। उसे भी साथ ले लीजिए।"

निर्मला कहती रही, लेकिन उसकी सुनी-अनसुनी करके राजा घोड़े को भगाता रहा। उसे तो लगा, यह कन्या मेरे हाथ से छूटकर भागने का बहाना ढूँढ़ रही है। इसलिए उसने और कसकर पकड़ लिया।

जब कई बार निर्मला ने वही बात कही तो राजा रूपसेन उसे धैर्य बँधाते हुए बोला-

"अब तो हम काफी दूर निकल आये हैं। नगर समीप ही है। अभी मैं अपने सैनिकों को भेज दूँगा। वे तुम्हारे छोटे भाई को तलाश करके ले आयेंगें। डरो मत, तुम्हें तुम्हारा भाई मिल जायेगा।"

निर्मला को चुप होना पड़ा। क्या कर सकती थी वह ? उसका कुछ जोर

चल भी नहीं सकता था।

राजा अपने महल में पहुँच गये। खुद घोड़े से उतरे और निर्मला को उतारा। उसी समय सैनिकों को आदेश दिया-

"वन के अमुक भाग में विशाल सघन वट वृक्ष है। उस वृक्ष पर एक लड़का बैठा होगा, उसे ले आओ।"

निर्मला ने कहा-

"मेरे भाई की आयु नौ वर्ष की है और शरीर का रंग, चेहरा, मोहरा आदि सब कुछ मेरा जैसा ही है।"

सैनिक गये। उसी वृक्ष तक पहुँच गये, लेकिन वृक्ष पर कोई लड़का न मिला, इधर-उधर चारों ओर काफी दूर तक देखा, पर निराशा ही हाथ लगी। खाली हाथ लौट आये।

भाई के न मिलने से निर्मला को बहुत दुःख हुआ। वह रोने लगी। राजा ने धैर्य बँधाया-

"रोती क्यों हो ? मैं और सैनिक भेजूँगा। वे तुम्हारे भाई को कहीं से अवश्य ही खोज लायेंगे।"

निर्मला ने भाई की याद में कई दिन तक भोजन नहीं किया, उसकी आँखों से आँसू बहते रहते। जब देखो सोमू-सोमू पुकारती रहती, नींद भी नहीं आती और घड़ी दो घड़ी नींद लगती तो बस सोमू के ही सपने देखती- सोमू वन में हरिणों के पीछे दौड़ रहा है, वह खरगोशों के साथ खेल रहा है। कभी जामुन के पेड़ पर चढ़कर जामुन खा रहा है और वह सपने में ही पुकार उठती-"सोमू, उधर मत जाना उधर शेर है, भालू है।"

राजा रूपसेन उसके मन बहलाव के लिए कभी उसे रथ में बिठाकर बगीचे में ले जाता, कभी सरोवर में जलक्रीड़ा करने ले जाता, उसे सुन्दर वस्त्र आभूषण लाकर देता, मधुर मिष्ठान्नों का तो ढेर ही उसके सामने लगा रहता। किंतु बहन का जी था। भाई के बिना उसे सब कुछ सूना-सूना लग रहा था न खाने में रस, न पहनने में।

छह महीने तक राजा ने उसे खूब समझाया। चारों तरफ सैनिकों को भी भेजा, परन्तु कहीं सोमदत्त का पता नहीं चला।

समय सभी दुःखों का इलाज है। वियोग के गहरे घाव समय के मरहम से ही भर जाते हैं। निर्मला भी धीरे-धीरे भाई सोमू को भूलने लगी और राजा के साथ हँसकर बोलने लगी। राजा ने उसे प्रसन्न देखा तो आश्वासन दिया- ''तुम्हारे भाई की खोज में मैंने चारों तरफ सैनिक भेज रखे हैं। जहाँ भी वह होगा उसे ढूँढकर जरूर लायेंगें अब तू मेरे साथ विवाह कर ले, रानी बन जायेगी, फिर सब जगह तेरा हुक्म चलेगा।'' निर्मला चुप रही। राजा ने उसकी सहमति समझकर पंडित को बुलाकर निर्मला के साथ विवाह कर लिया। उसकी सुन्दरता पर राजा ऐसा मोहित हुआ कि अपनी अन्य रानियों को जैसे भूल ही गया। उसका अधिकांश समय निर्मला के साथ ही गुजरता।

निर्मला भी पति के प्यार में जैसे सब कुछ भूल गई। अब उसके सोने के दिन और चाँदी की रातें थीं। पति का संपूर्ण प्रेम उसे मिल रहा था।

यद्यपि निर्मला सुन्दर थी, किन्तु पति-प्रेम से उसका सौन्दर्य और भी चमक उठा। उसके सारे शरीर में लावण्य छलकने लगा।

दास-दासी सब उसकी सेवा में खड़े रहते थे।

राजा का उन सब दास-दासियों को सख्त आदेश था कि नई रानी निर्मला की प्रत्येक इच्छा तुरन्त पूरी की जावे।

वैभव उसके चारों ओर अठखेलियाँ कर रहा था। निर्मला इस वातावरण में सुखी थी-बहुत सुखी।

कई महीने इसी तरह गुजर गये। राजा के प्रेम का प्रतीक उसके उदर में पलने लगा। राजा रूपसेन और रानी निर्मला की खुशी और बढ़ गयी। राजा को उत्तराधिकारी प्राप्त होने की आशा बँधी। उसके हृदय में निर्मला का सम्मान और भी बढ़ गया।

'नई रानी निर्मला गर्भवती है' यह समाचार राजा रूपसेन की अन्य रानियों के लिए वज्रप्रहार ही था। यद्यपि उन्होंने ऊपर से खुशी दिखाई, लेकिन अन्दर ही अन्दर सभी जल उठीं। ईर्ष्या की आग हृदय में लग गई।

जलने का कारण भी था। उनके विवाह को कई वर्ष बीत चुके थे, लेकिन सभी की गोद खाली थी। सभी निःसन्तान थीं। उन्होंने मन ही मन समझ लिया कि राजमाता का पद नई रानी को मिलेगा। वही पटरानी बनेगी। हमारा मान-सम्मान

बिल्कुल ही समाप्त हो जायेगा और यदि समाप्त न भी होगा तो बहुत कम तो हो ही जायेगा।

हम इतने बड़े घरों की हैं। हमारी कोई पूछ नहीं और इस नई रानी के जात-पाँत का कोई ठिकाना नहीं और बन बैठी राजरानी।

सभी रानियों को अपने मान-सम्मान की सुरक्षा की चिन्ता हुई और साथ ही पति को अपनी ओर आकर्षित करने की भी। उन सबका स्वार्थ बिन्दु एक ही था। इसलिए सभी मिलकर एक स्थान पर बैठीं। सबसे बड़ी रानी ने चर्चा शुरू की-

"बहनों! इस नई रानी के आने से हमारा मान-सम्मान तो कम हो ही गया हैं। अब तो महाराज हमारे पास आते भी नहीं।"

दूसरी बोली-

"अब तो वह गर्भवती भी हो गई है। यदि उसके पुत्र हो गया तो उसके पुत्र को ही युवराज का पद मिलेगा।"

तीसरी ने विचार प्रगट किये-

"तब तो यह नई रानी ही पटरानी बनेगी। हमें कौन पूछेगा ? हम सब पर इसका ही अधिकार हो जायेगा।"

चौथी ने कहा-

"इसी की आज्ञा माननी पड़ेगी, हमारी स्थिति बहुत ही निम्न हो जायेगी। एक तरह से हम उसकी दासियाँ हो जायेंगी।"

बड़ी रानी ने कहा-

"तुम सबका कथन सत्य है। भविष्य सामने दिखाई दे रहा है। हमें अभी से चेत जाना चाहिए। कोई ऐसा उपाय करना चाहिए, जिससे हमारा मान-सम्मान-सुरक्षित रहे।"

"और जो रानी आज महाराज की प्रिय बनी हुई है वह उनकी आँख की किरकिरी बन जाय। महाराज उसकी ओर देखें भी नहीं।" दूसरी के हृदय की ईर्ष्या व्यक्त हुई।

तीसरी ने समस्या की ओर रुख मोड़ा-

"यह सब तो होना चाहिए। लेकिन समस्या तो यह है कि ऐसा हो कैसे ? उसके लिए क्या उपाय किया जाय ?"

(क्रमशः)

बाल-स्तम्भ

मिटा सर्प का दर्प

श्री राजेश जैन 'देवकर'

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित कहानी को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर १० मई २००८ तक श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-३४२००१ (राज.) के पते पर प्रेषित करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्री मनोजकुमार जी, कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-२५० रुपये, द्वितीय पुरस्कार-२०० रुपये, तृतीय पुरस्कार- १५० रुपये तथा १०० रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार।

तरुण वय में एक साधक (प्रभु महावीर) प्रथम चातुर्मास व्यतीत कर एकान्त तपश्चरण की कामना से निर्जन पादपथों में विचरण कर रहे थे।

चरवाहों की एक टोली हरीतिमा की आस में उधर ही घूम रही थी। उन्होंने भी उस युवा साधक को देखा जिनके मुखमण्डल पर दिव्य आभा विद्यमान थी, जिनकी छवि में अप्रतिम सौंदर्य और कांति व्याप्त थी। उनकी चमत्कृत रूपराशि और सौम्य व्यक्तित्व को देख ग्वाले स्वतः नतमस्तक हो गये। प्रणम्य मुद्रा में उन्होंने साधक का अभिवादन किया। साधक ने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया। वे तो प्रशंसा एवं निन्दा से तटस्थ आत्मकल्याण के महासाधक थे। उनके लिए प्रशंसा और निन्दा में न कोई अंतर था न कोई लाभ-हानि। वे निरभिमानी / निरभिलाषी साधक निर्विशेष भाव से आगे बढ़ गये, एक अज्ञात पथ की ओर।

साधक को उस अज्ञातपथ की ओर जाते देख अनहोनी के भय से ग्वाले सिहर उठे। उन्होंने आवाज लगाई 'भंते.....भंते!' साधक के प्रशस्त कदम स्थिर हो गये। ग्वालों ने पास आकर निवेदन किया- ''भंते! आप उधर न पधारें। वहाँ महागरल, महाकोपी चंडकौशिक नामक सर्प का भयानक उपद्रव मचा हुआ है। सारा वनप्रान्त उसकी गरलवृत्ति से आक्रान्त है।

दूसरे ग्वाले ने पुष्टि करते हुए कहा-"हाँ देव! दृष्टिविष वाला यह सर्प सारे अरण्यकों के लिए महासंकट बना हुआ है। उसके विषैले फुत्कारों से पशुपक्षी मर रहे हैं और वनस्पतियाँ भी झुलस रही हैं। संपूर्ण वातावरण विषमय हो चुका है। कृपा करके उस विषाक्त भूमि की ओर आप न पधारें।"

साधक ने ग्वालों की बात ध्यान से सुनी। सोचा, स्वर्ण ज्वालाओं से तपकर ही सच्चा बनता है। उत्कृष्ट संयम की परीक्षा भी संकटों से ही होती है। जिसका हृदय जितना सबल होता है वह उतना ही निर्भय होता है। वे साधक भी भय और द्वेष से मुक्त होकर निर्भय और निर्दोष बनना चाहते थे। वे अंतर की परिणतियों को इतना शुद्ध और पावन बना लेना चाहते थे जिससे छोटी-छोटी बाधाओं से सहज ही पार हुआ जा सके।

वे ग्वालों की चेतावनी को अनसुनी कर वीथिका पर शान्त चित्त बढ़ने लगे। ग्वालों ने तो कभी उस सर्प के निकट जाने का साहस नहीं किया था, जबकि साधक को सहजतापूर्वक उधर बढ़ते देख सभी घबरा गये, भयाक्रांत हो गये। साधक ने देखा राह के सारे वृक्ष ठूँठ हो चुके हैं। पशुओं की आहट और पक्षियों का कलरव भी नहीं है। सारा वन क्षेत्र उजाड़ और निर्जीव हो गया है। किसी भी जीव या वनस्पति का अस्तित्व तक दिखाई नहीं दे रहा है। साधक बढते हुए बाँबी के निकट पहुँचे। उन्होंने वहीं ध्यानस्थ होना उचित समझा और कायोत्सर्ग की मुद्रा में वे खड़े हो गये। उनके मुख मंडल से अभय और मैत्री का निर्झर झर रहा था। जिनके मन में किसी के प्रति हिंसा नहीं, द्वेष नहीं और अमंगल की भावना नहीं, वे भला अमंगल की आशंका से क्यों घबरायें? वे शांत, निश्चल व आनन्द की मुद्रा में स्थिर थे। शिथिल शरीर और निर्विकार मन उनकी स्वायतत्ता की घोषणा कर रहे थे।

बाँबी में बैठा क्रोधी चण्डकौशिक आहट का अनुमान लगाकर बाहर निकला। वह अत्यन्त काला और दीर्घकाय था। उसके भयानक मुख से क्रोध और द्वेष स्पष्ट झलक रहा था। किसी व्यक्ति को वहाँ खड़े देख उसके आश्चर्य का पारावार न रहा। समय की धारा ही बह गई थी उसे किसी मानव को देखे। दरअसल किसी मानव ने लम्बे समय से इधर आने का साहस तक नहीं किया था। जबकि उसने देखा, यह व्यक्ति किस तरह तनकर खड़ा है। उसका क्रोध

जाग उठा। अपनी भयानक लपलपाती जीभ से उसने बड़ी निर्ममतापूर्वक साधक के चरणों में दंशाघात किया। इस विष प्रहार के बाद भी साधक निश्चल और आत्मलीन रहे। वे उसी भाँति ध्यानस्थ खड़े रहे। अचल और अकंप ! अभय और अजेय!

अपने वार को निष्फल होते देख चण्ड का क्रोध प्रचण्ड हो गया। इस विफलता से उसके क्रोध का ज्वालामुखी फूट पड़ा। वह क्रोधावेग से बावला हो उठा। अपनी सम्पूर्ण क्षमता से उसने जहरीली व नुकीली डंक्रों की बौछार आरम्भ कर दी। साधक के पाद युगल छलनी हो गये, किन्तु महान् आश्चर्य! न नीली गाजें निकली, न साधक के मुख का तेज ही कम हुआ। निढाल और निराश होकर वह बैठ गया वहीं। साधक फिर भी ध्यान में तल्लीन रहे। न कोई प्रतिक्रिया, न रक्षा या आक्रमण का कोई उपाय। वे करुणा और प्रेम से लबालब भरे रहे।

भयभीत ही वार करता है और रक्षात्मक उपाय करता है। भीरु ही आक्रामक होता है और प्रतिरक्षा का प्रयास करता है। आत्मरक्षा का उपाय वही करता है जो दूसरों को आतंकित करता है जबकि आक्रमण भी वही करता है जो भय से भरा होता है। हिंसक ही वार और पलटवार करता है जबकि अहिंसक घात-प्रतिघात की भावना से दूर रहता है। न वह घात करता है और न घात का प्रत्युत्तर देता है।

एक फन फैलाए बैठा है और एक वात्सल्य बिखेर रहा है।
एक की आश्चर्य की मुद्रा है, एक की आनन्द की मुद्रा।

एक के लिये यह अप्रत्याशित घटना है और एक की यह साधना की परीक्षा।

साधक अत्यन्त शांत, स्थिर और संतुलित थे। अमृत और विष का द्वंद्व चला, पर साधक निर्भय, निर्विकल्प और निर्द्वन्द्व ही रहे। वे बाह्य युद्ध से असंलग्न होकर आत्मप्रसन्नता की अमर लहरियों में तैरते रहे। वे अन्तर के परिणामों को शुद्ध करने का युद्ध लड़ते रहे।

एक ओर चंडकौशिक था जिसके अन्तर हृदय में विष और द्वेष था तो दूसरी ओर वे श्रमण थे जिनका अंतर मैत्रीभाव से सराबोर था। चंडकौशिक

विष और द्वेष फैला रहा था जबकि प्रभु महावीर प्रेम और अमृत बाँट रहे थे। चंडकौशिक ने स्वभाव वश यहाँ भी विष ही स्रावित किया, पर उसके विष का साधक पर कोई असर नहीं हुआ, अपितु साधक ने प्रेम और मैत्री की सुधा बाँटकर उसको विजित कर लिया। विष को पराभव का शाप मिल गया। साधक की शान्त मुद्रा ने सर्प के दर्प और उसके क्रोधत्व का नाश कर दिया।

चंडकौशिक कुछ क्षणों के लिए किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। वह सोचने लगा-"आज तक मेरे डंक से कोई बच न सका फिर यह कौन है? कैसा मानव है जो मेरे प्रभावों से निरापद है। आज मेरी रौद्र दृष्टि और विष वृष्टि क्यों पराभूत हो गई? आज मैं क्यों इतना निरुपाय और असमर्थ हो गया? क्यों....क्यों?" वह अपने पराजय पर पश्चात्ताप करने लगा। उसका क्रोध विस्मय में और द्वेष पश्चात्ताप में परिवर्तित होने लगा। उसकी दृष्टि का विष घुलने लगा। उसके रोम-रोम में शांति व सुधा व्याप्त होने लगी।

उसी क्षण साधक ने ध्यान संपन्न कर अपनी आँखें खोली। उसके चक्षु से निस्सीम प्रेम का अमृत छलक रहा था। वे मौन थे, किन्तु नेत्रों की निर्मल भाषा में बोल रहे थे- "हे चंडकौशिक बुज्झ ! बुज्झ ! समझ! समझ! तूने कितना प्रचण्ड क्रोध किया, कितनी भयानक पाप प्रवृत्ति की। लाखों जीवों के जीवन से खेला है तू। तूने क्यों उनका अहित किया ? तू जब किसी को जीवन दे नहीं सकता तो तुझे किसी का जीवन लेने का भी कोई अधिकार नहीं है। देख आज तेरे शरीर की भाँति तेरी आत्मा भी कितनी मलिन हो चुकी है। इस आत्मा को पावन बना इसी में तेरा कल्याण है। पावन आत्मा में ही परमानन्द का वास होता है। क्षमा और समता को धारण कर वही आवागमन के बंधनों से तुझे मुक्त करायेगी। हे चंड! सोच! चेत! संत (मानव)के जीवन में क्रोध करके तुम सर्प बने और अब सर्प के जीवन में क्रोध करोगे तो कहाँ जाओगे? अब तो चेत, अब तो समझ, अब तो सम्हल!"

कितना महान दृश्य - मौन प्रेरणा और मौन प्रवचन।

चंडकौशिक के अंतर में हलचल मच गई। उसके हृदय में अंतर्द्वन्द्व छिड़ गया। वह चिन्तन करने लगा- मैंने निर्दोष और मूक प्राणियों को अकारण सताया, डराया और उनके प्राण तक हर लिये। अहा ! मैंने कितना घोर अनर्थ किया, कितना कठोर पाप कर्म बाँधा। सोचते-सोचते शुद्ध पश्चात्ताप से उसने

जातिस्मरण ज्ञान का उपार्जन कर लिया। उसे स्पष्ट रूप से अपने पूर्व भवों की विनाश लीला दिखाई देने लगी। किस तरह साधक के वेश में भी क्रोध के वशीभूत होकर भयानक दुर्गति को पाया था। सद्धर्म की शरण पाकर भी पतित हुआ था। क्रोध की विकराल भट्टी में जलकर मैंने निकट आये अपने मुक्ति के महाद्वार को ही खो दिया था। भव-भव से मैंने क्रोध का गरल पान किया और सिर्फ अपने सर्वनाश का ही पथ चुना। अब तक मेरा जीवन क्षुद्र और तुच्छ कषायों के भेंट ही चढ़ा। अब मुझे क्रोध को तजकर आत्म-शांति का वरण करना होगा। क्रोध का निरोध कर क्षमा को धारण करना होगा। आत्मा को पतन से बचाकर आत्मोत्थान का द्वार खोलना होगा।

कृतज्ञ भाव से साधक को देखते हुए वह सोचने लगा-"इस साधक की कितनी उत्तम क्षमा है, उत्तम अहिंसा है। ये कितने क्षमावीर हैं, महावीर हैं। मैंने विषैली वायु का बादल छोड़ते हुए इन्हें मृत्यु के मुख में झोंका। इनका ध्यान भंग करने का दुःसाहस किया। इनके कोमल अंगों पर अपने भयावह डंक मारे। अपनी ही मुक्ति के दाता के लिए घोर उपसर्ग निर्मित किया। फिर भी उन्होंने मुझे क्षमा का अमृत दिया, मेरी मुक्ति की राह दिखाई। पता नहीं क्षमा का यह अमृत आज मुझे नहीं मिलता तो मैं क्रोध की भट्टी में जाने कब तक जलते रहता।"

चंडकौशिक आत्मग्लानि में डूबा जा रहा था। उसकी क्रोधी आँखों से पश्चात्ताप के आँसू झरने लगे। अंततः उसने मैत्रीभाव धारण करके अपना घमण्डी मस्तक साधक के मृदुल चरणों में टिका दिया। अनायास ही साधक के वरदहस्त ने उसके सिर को ढक लिया। साधक के पौरुष से अहिंसा की प्रतिष्ठा और मैत्री की विजय हुई।

अब चंडकौशिक क्रोध का परित्याग कर चुका था। वह भी उस साधक का पथानुगामी बन गया जिसने सारे संसार को विष के बदले अमृत बाँटा। चंड ने क्षमा का भूषण धारण कर लिया। वह वीर अनुयायी बन गया।

शान्ति से क्रांति का सृजन हो गया। साधक ने कैसी अनुपम वीरता से कषायों को पराजित कर दिया। अपने उपसर्ग दाता को मुक्ति का दान दे दिया और स्वयं वे महावीर, वे महानायक, वे साधक आत्मसाधना करने, सारे

संसार को प्रतिबोध देने आगे बढ़ गये।

-जैन स्कूल परिसर, जी.ई.रोड़, राजनांदगांव(छ.ग.)४९१४४१

प्रश्न

१. प्रशंसा और निन्दा में समान रहने का क्या तात्पर्य है?

२. पथ, अचल, आँसू, मस्तक एवं विष शब्दों के समानार्थक शब्द लिखिये।(कथानुसार)

३. विलोम लिखिये-
निरभिमानी, निष्फल, प्रशंसा, प्रतिक्रिया,सौन्दर्य,
घात,विषमय, क्रोध, दीर्घकाय, पतन

४. प्रभु महावीर ने चण्डकौशिक को क्या उपदेश दिया? तीन पंक्तियों में सार लिखे।

५. 'चंड ने क्षमा का भूषण धारण किया'- इस सम्बन्ध में संस्कृत सूक्ति लिखिये।

६. 'क्रोध करता है विनाश'- शीर्षक पर ५० शब्दों में अपने विचार लिखिए।

बाल-स्तम्भ [फरवरी-२००८] का परिणाम

जिनवाणी के फरवरी-२००८ के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'भावना की महिमा' कहानी के प्रश्नों के उत्तर ३५ बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, उनमें से प्रतियोगिता के विजेता इस प्रकार हैं। पूर्णांक २० में से दिये गये हैं

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-२५०/-	कीर्तिका कोठारी-ब्यावर	१९.५
द्वितीय पुरस्कार-२००/-	हनी जैन-सूरत	१९
तृतीय पुरस्कार- १५०/-	कमलेश जैन-पादरू	१८.७५
सान्त्वना पुरस्कार- १००/-	हितेश जैन-सवाईमाधोपुर	१८.५
	मनोज जैन-सवाईमाधोपुर	१८.५
	संयम मेहता-पीपाड़	१८
	दीप्ति जैन-कोटा	१८
	रूपल गांग-जोधपुर	१८

आओ स्वाध्याय करें

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद्

द्वारा प्रायोजित त्रैमासिक प्रतियोगिता (१७)

(युवाश्रेणि के लिए अलग से १३ पुरस्कार)

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् के माध्यम से 'आओ स्वाध्याय करें' त्रैमासिक प्रतियोगिता-परीक्षा (१७) का आयोजन 'जिनवाणी' के जनवरी-फरवरी-मार्च २००८ के अंकों के आधार पर किया जा रहा है। इसमें कुल ५० प्रश्न पूछे गए हैं, जिनके उत्तर **श्री गौतम जैन (पचाला वाले), उपाध्यक्ष-अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद्, १९२ बी, मीटर गेज रेलवे कॉलोनी, बजरिया-३२२००१, सवाईमाधोपुर, फोनं. ९४६०४४१३५१** के पते पर १५ मई २००८ तक मिल जाने चाहिए। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को क्रमशः १००१ रुपये, ५०१ रुपये एवं २५१ रुपये के पुरस्कार से पुरस्कृत किया जाएगा। १०० रुपये के १० प्रोत्साहन पुरस्कार भी दिए जायेंगे। अब ये सभी पुरस्कार १५ से ४५ वर्ष के युवा श्रेणि के उत्तरदाताओं को अलग से दिए जायेंगे। इस प्रकार पुरस्कारों की संख्या २६ हो गई है। युवाश्रेणि हेतु प्रत्येक प्रतियोगी अपने नाम एवं पते के साथ उम्र का भी अवश्य उल्लेख करे। जो प्रतियोगी अपने प्राप्तांक शीघ्र जानना चाहते हों, वे प्रविष्टि के साथ जवाबी पोस्टकार्ड भेज कर परिणाम जान सकते हैं। सभी उत्तरदाताओं से निवेदन है कि वे उत्तर भेजते समय केवल प्रश्न क्रमांक व उत्तर ही भेजें। प्रश्न/पृष्ठ संख्या लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है। -सम्पादक

(क) मुझे पहचानो-

०१. मैं सारे संसार को जल का दान करने पर भी जल से शून्य नहीं होता हूँ।
०२. भेद विज्ञान ही मेरी आधार शिला है।
०३. मैं बदली तो भाग्य के सितारे बदले।
०४. हमें किसी प्रकार का भय नहीं है।
०५. मेरा सब इतंजार करते हैं, पर मैं किसी का इतंजार नहीं करता।
०६. मेरे लिए विषरस पीयूष रस बन गया।
०७. सभी धर्मों ने मेरे महत्त्व को स्वीकार किया है।
०८. वर्तमान को सार्थक करने की कला मुझमें विद्यमान है।
०९. मनुष्य में गलत विचार एवं आपराधिक भावनाएँ मेरे कारण ही पनपती हैं।
१०. मेरे बिना साधक धर्म नहीं कर सकता।

(ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए-

११. अज्ञान में से मिथ्यात्व निकल जाये तो क्या बचेगा?
१२. गुजरात में मंदिर को क्या कहते हैं?

१३.किन मनुष्यों को जन्म से ही अवधिज्ञान होता है?
१४.कम खाना एवं गम खाना कौनसा तप है?
१५.मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा दोष एवं विकार?
१६.''पीयें धोवन पानी'' कौन कह रहा है?
१७.हमारे पूर्वज ग्रुप काउन्सलिंग कहाँ किया करते थे?
१८.वह भी कपोल कल्पना है। क्या?
१९.सूर्य, शनि, मंगल वगैरह नवग्रह से भी भयंकर ग्रह?
२०.धोवन पानी से होने वाले लाभ का कथन किस आगम में है?

(ग) रिक्त स्थान भरिए-

२१.....के स्वाध्याय से धर्म-साधना का सम्बल मिलता है।
२२.भारत में.....एक दूसरे के सुख-दुःख का साथी रहा है।
२३.....वेश्या के समान अनेक रूप धारण करती रहती है।
२४.....से बच पाना असंभव है।
२५.दूसरों को ठगना.....कहलाता है।
२६.पति-पत्नी दोनों कामकाजी हों तो घर केवल.....बन जाता है।
२७.न्याय नीति के दरवाजों पर.....के पहरे हैं।
२८.संसार में.....ज्ञान-सफलता के लिए बहुत उपयोगी होता है।
२९.....हुए बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती।
३०.आखिर कब तक हम.....वृत्ति से भारी कर्मा बनकर भटकते रहेंगे।

(ङ) अंकों में उत्तर दीजिए

३१.श्रावक के अभिगम कितने होते हैं?
३२.नागश्री के शरीर में कितने महाभयंकर रोग उत्पन्न हुए?
३३.कितने उपांग सूत्रों को कालिक सूत्र माना जाता है।
३४.मंगल कितने होते हैं?
३५.जीव के कितने भेदों में जन्ममरण सीमित है?
३६.आचार्य प्रवर के शासनकाल में कुल कितनी दीक्षाएँ हो चुकी हैं?
३७.अभय के लिए कितने तत्त्व बाधक हैं?
३८.स्वामी लालचन्द जी म.सा. ने संयमी जीवन में कितने मासखमण किए?
३९.अन्तरात्मा की अवस्था को कितने गुणस्थान प्रकट करते हैं?
४०.जिनदास श्रावक ने स्वप्न में कितने हजार साधुओं को मासखमण का पारणा कराया?

(ङ) हाँ/ना में उत्तर दीजिये।

४१. व्यवहार राशि के जीवों की संख्या सिद्धों की संख्या से अधिक है।

४२. सोने एवं चाँदी के घड़े को टूट जाने पर दुबारा बनाया जा सकता है अतः यह असंस्कृत है।

४३. जगत् में साथ है।

४४. बालक को मेरा मानना ममता नहीं है।

४५. क्रोध आना एवं क्रोध करना एक ही बात है।

४६. पुण्य हेय नहीं, पुण्य की आसक्ति हेय है।

४७. क्रोध ऐसा गुण है जो पुण्य का अंत करता है।

४८. मांगलिक पाठ सुनने के साथ सुनने वाले को भी पूर्ण पाठ दोहराना चाहिये।

४९. मूर्खता मोहनीय कर्म के उदय से होती है।

५०. केवलज्ञान की प्राप्ति तब ही हो सकती है जब पुण्य का अनुभाग चतुःस्थानिक हो।

त्रैमासिक प्रतियोगिता (१६) का शेष परिणाम

४८ अंक प्राप्त करने वाले प्रतियोगी:- संगीता दरड़ा-जोधपुर, अरूणा जैन-जोधपुर, महेन्द्र कुमार दरड़ा-नासिक, चुकी देवी दरड़ा-नासिक, सुमेर लुणावत-पांचलासिद्धा, पुष्पा लुणावत-पांचलासिद्धा, पारसकंवर भण्डारी-चैन्नई, हेमराज सुराणा-जयपुर, मनीषा जैन-बैराथलकला, बबीता जैन-सवाईमाधोपुर, मोनिका जैन-सवाईमाधोपुर, प्रियंका जैन-सवाईमाधोपुर, प्रतीक्षा जैन-हिंडौन, सबीता जैन-बछामदी, अरिहंत जैन-जयपुर, पूजा जैन-गंगापुर सिटी, सुषमा रवीन्द्र जी मूथा-लासुर स्टेशन, शारदा एच. मूथा-लासुर स्टेशन, विवेक जैन-गंगापुर सिटी, योगेश जैन-जयपुर, हेमलता जैन-ब्यावर, विमला ज्ञानचंद बरड़िया-बोदवड़, राजेश लुणावत-आचीणा, प्रियंका कोठारी-आचीणा, नथमल कोठारी-बालोद, अनीता जैन-नवसारी, दिलीप नागौरी-बम्बोरा, प्रभावती नागौरी-बम्बोरा, मनीष लुणावत-बैराथल कला, इचरज देवी मुणोत-जयपुर, मंजू श्री सुराणा-जोधपुर, हेमन्त-पहुना, अनीता धनराज जैन-सवाईमाधोपुर, लक्ष्मीचंद छाजेड़-बालोतरा, नवरती देवी-रतकुड़िया, शिल्पा बोहरा-रतकुड़िया, कविता भण्डारी-जोधपुर, ज्योति अशोक कोटेचा-बोदवड़, रूपल गांग-जोधपुर, बिदाम कोठारी-इन्दौर, विमला स्वरूपचन्द भंडारी-भंडारा, योगिता अनिल खिंवसरा-मुकटी, दर्शना खींवसरा-मुकटी, बसंती चंपालाल भटेवरा-धुले, निर्मला जैन-इन्दौर, प्रवीण एन. जैन-धुले, गजराज सेठिया-धनारीकलां, जवाहरलाल पारख-होलनांथा, नीलिमा बोथरा-शिरपुर, राजेन्द्र कुमार जैन-शिरपुर, मीना मनोहर सेठिया-होलनांथा, हेमन्त डागा-बूँदी, संगीता बोथरा-जलगांव, पी. इन्दिरा-चिदम्बरम, दीपा अ. कोठारी-अहमदनगर, मीनाक्षी छाजेड़-समदड़ी, पद्मा सुरेश मुणोत-भंडारा

संवाद

मार्च २००८ के जिनवाणी अंक में पूछे गये प्रश्न के उत्तर हमें अभी तक प्राप्त हो रहे हैं। श्रेष्ठ उत्तरों का प्रकाशन आगामी अंक में किया जायेगा।

८. प्रश्न- "मेरे पास पर्याप्त सम्पत्ति है, परिवार की भी अनुकूलता है, शरीर भी ठीक है, समाज में भी प्रतिष्ठा है, फिर भी मन में शान्ति नहीं रहती है। इसका क्या कारण है?"

-चिन्तन (काल्पनिक नाम)

कृति की २ प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. धर्मचन्द जैन

***जीवसमास**- अज्ञात कर्तृक, **अनुवादक**- साध्वी विद्युत्प्रभा श्री जी, **सम्पादन एवं भूमिका**- डॉ. सागरमल जैन, **प्रकाशक**- पार्श्वनाथ विद्यापीठ, आई. टी. आई. रोड़, करौंदी, वाराणसी- २२१००५, **पृष्ठ** ५०+२४४, **मूल्य** १६० रुपये,*

'जीवसमास' एक महत्त्वपूर्ण प्राचीन कृति है जो किसी पूर्वधर आचार्य की रचना प्रतीत होती है। इस कृति में 'जीवसमास' शब्द का प्रयोग १४ गुणस्थानों का सूचक है। ग्रन्थ में निक्षेप, अनुयोगद्वारों, मार्गणा स्थानों आदि का कथन करने के अनन्तर (१) सत्प्ररूपणा द्वार (१) परिमाण द्वार (३) क्षेत्र द्वार (४) स्पर्शन द्वार (५) काल द्वार (६) अन्तर-द्वार (७) भाव द्वार एवं (८) अल्पबहुत्व-द्वार के माध्यम से तात्त्विक विवेचन किया गया है। सत्प्ररूपणा द्वार के अन्तर्गत १४ मार्गणाओं से विवेचन है- गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्यत्व, सम्यक्त्व, संज्ञी एवं आहार मार्गणा। परिमाणद्वार में द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव एवं जीवद्रव्य परिमाण के द्वारा विवेचन किया गया है। क्षेत्र-द्वार में जीवों की अवगाहना की चर्चा है। स्पर्शन-द्वार में तीनों लोकों एवं जीव-अजीव द्वारा स्पर्शना का वर्णन है। काल-द्वार के अन्तर्गत भवायु, कायस्थिति एवं गुणविभाग काल का निरूपण है। अन्तर-द्वार के अन्तर्गत जीव-अजीव के विरहकाल का प्रतिपादन है। भावद्वार में क्षायिकादि पाँच भावों का विवेचन है। अल्पबहुत्वद्वार चार गतियों के अल्पबहुत्व का उल्लेख करता है। इस प्रकार जैन कर्म-सिद्धान्त एवं गुणस्थान विवेचन की दृष्टि से 'जीव-समास' पुस्तक अतीव उपयोगी है। इसमें पंचसंग्रह की अनेक गाथाएँ मेल खाती हैं। डॉ. सागरमल जी जैन के अनुसार यह पाँचवीं शती की कृति है। 'जीव समास' नाम से दिगम्बर कृति भी है, किन्तु पण्डित हीरालाल जी शास्त्री के अनुसार श्वेताम्बर कृति का हिन्दी अनुवाद एवं विवेचन खरतरगच्छीया साध्वीवर्या श्री मणिप्रभा श्री जी म.सा.की शिष्या साध्वी श्री विद्युत्प्रभा श्री जी ने किया है तथा ग्रन्थ की विस्तृत भूमिका डॉ. सागरमल जी जैन द्वारा लिखी गई है।

नव सम्वत्सर २०६५ के अवसर पर सभी पाठकों एवं लेखकों को हार्दिक मंगलकामनाएँ। -सम्पादक

समाचार-विविधा

शान्तस्वभावी-तपस्विनी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा. का देवलोक गमन

शान्तस्वभावी तपस्विनी महासती श्री शान्तिकंवर जी म.सा. का चैत्र कृष्णा सप्तमी, शनिवार सं. २०६४ तदनुसार २९ मार्च २००८ को प्रातः करीब ५ बजे समत्वभावों में देवलोक गमन हो गया। ५५ वर्षीय दीक्षा पर्यायवाली महासतीवर्या विहार में असमर्थ होने के कारण विगत चार वर्षों से पीपाड़ में स्थिरवास विराज रही थीं। शान्त, सौम्य महासती जी का सेवा, साधना, तपस्या एवं प्रेरणा में अग्रणी स्थान था।

आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के मुखारविन्द से पाली में वि.सं. २००९ की मार्गशीर्ष शुक्ला दशमी को तीन मुमुक्षु आत्माओं की भागवती दीक्षाएँ सम्पन्न हुईं, जिनमें श्री जालमचन्द जी चौधरी जयन्ती मुनि के नाम से जाने गये, श्रीमती सुआबाई कांकरिया और घीसीबाई को दीक्षा पश्चात् आचार्य भगवन्त ने क्रमशः महासती श्री शांतिकंवर जी और महासती श्री ज्ञानकंवर जी नाम प्रदान किये।

श्रीमती सुआबाई का जन्म भोपालगढ़ के समीप अरटिया कलां के धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री सिरेमल जी कर्नावट के यहाँ वीरमाता श्रीमती भंवरीबाई कर्नावट की कुक्षि से वि.सं. १९८४ कार्तिक कृष्णा एकादशी को हुआ। यौवनावस्था में उनका पाणिग्रहण संस्कार भोपालगढ़ के श्रावकरत्न श्री भंवरलाल जी कांकरिया के साथ हुआ। किन्तु अकाल में ही उन पर वैधव्य की विपदा आ पड़ी। पीहर एवं ससुराल पक्ष के संस्कारों के कारण परिवारजनों के सहयोग एवं रत्नसंघीय महासती श्री हरकंवर जी म.सा. की पावन प्रेरणा से उनकी संयम-साधना में जीवन को सफल बनाने की भावना बनी। दीक्षित होकर महासती जी ने विनय-विवेक के साथ सेवा और स्वाध्याय में जीवन समर्पित कर दिया। अपनी गुरुणी महासती जी की अग्लानभाव से सेवा करते हुए शान्तस्वभावी महासती जी ने वि.सं. २०२२ से २०२९ तक आठ वर्ष मेड़ता विराजते समय सदा प्रसन्नता का भाव रखा।

शान्तस्वभावी महासती जी ने वि.सं. २०५१ में पुष्कर चातुर्मास में मासखमण तप किया। तदनन्तर अलीगढ़ (टोंक), हिण्डौन, धनोप आदि चातुर्मासों में भी मासखमण तप किए। तप-साधिका महासती ने कुल ४ मासखमण तप किए एवं

प्रायः प्रतिवर्ष अठाई और अठाई से ऊपर यथा २४ एवं १८ दिवसीय उल्लेखनीय तपश्चर्याएँ की। श्रावण और भाद्रपद में एकान्तर तप करने और सुदीर्घ तपश्चर्याएँ करते रहने के कारण आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने श्री शांतिकंवर जी म.सा. को 'तपस्विनी' उपाधि से विभूषित किया।

शान्तस्वभावी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा.की शिष्याओं में महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा., महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा., महासती श्री सुमतिप्रभा जी म.सा. प्रभृति चौदह साध्वियाँ जिनशासन की सेवा में सन्नद्ध हैं। शान्तस्वभावी महासती जी विगत छः वर्षों से भोपालगढ़ और पीपाड़ विराजे तब महासती श्री इन्दुबाला जी ने अपनी गुरुणी जी की खूब सेवा की।

२९ मार्च २००८ को स्वर्गगमन की सूचना समीपवर्ती-सुदूरवर्ती क्षेत्रों में विद्युत वेग की भाँति पहुँची। जोधपुर, जयपुर, पाली, भोपालगढ़, गोटन, मेड़ता, नागौर, अजमेर, ब्यावर, धनोप, सरवाड़, नसीराबाद, कोसाना, साथिन, खेजड़ला, सोजत रोड, मदनगंज-किशनगढ़, बारनी, बिलाड़ा, पालासनी आदि अनेक ग्राम-नगरों के श्रीसंघ एवं श्रद्धालु पीपाड़ पहुँचे और महासती जी के पार्थिव देह के अन्तिम संस्कार में भाग लिया। संघ के पूर्व अध्यक्ष एवं शासन सेवा समिति के सदस्य श्री कैलाशचन्द जी हीरावत मय परिवार, संघ कार्याध्यक्ष श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना, महामंत्री श्री नवरतन जी डागा, शासन सेवा समिति के सदस्य श्री ताराचन्द जी सिंघवी, श्री प्रसन्नचन्द जी बाफना, श्री अरूण जी मेहता, श्री हस्तीमल जी गोलेछा सहित अनेक प्रमुख श्रावकों ने पीपाड़ पहुँचकर श्रद्धा समर्पित की। पीपाड़ रत्नसंघ के अध्यक्ष श्री हस्तीमल जी बोहरा उस दिन मुम्बई में थे, किन्तु महासती जी के स्वर्गगमन हो जाने के समाचार प्राप्त होते ही वे वायुयान से जोधपुर होकर पीपाड़ पहुँचे। पीपाड़ सकल जैन समाज के आबाल-वृद्ध भाई-बहिनों के अलावा बड़ी संख्या में अजैन बन्धुओं ने अन्तिम संस्कार में सहर्ष भागीदारी निभाई।

श्रीमती शरदचन्द्रिका मोफतराज मुणोत स्वाध्याय भवन से सजी-धजी बैकुंठी में शान्तस्वभावी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा. की पार्थिव देह की अन्तिम यात्रा प्रारम्भ हुई। हजारों की संख्या में कोट, चौपाटा बाजार, पार्श्वनाथ मन्दिर मार्ग, इलाजी बाजार से होती हुई विशाल जनमेदिनी जय-जयकार के गगनभेदी जयनाद करती चल रही थी तो बाजारों और घरों की छतों पर जन-समुदाय अन्तिम यात्रा के दृश्य को धूप में खड़े-खड़े भी देखता रहा। बैण्ड की धुन, भजन मण्डलियों के भजन के आकर्षण से ऐसा लगा मानो पीपाड़ एक जगह एकत्रित हो गया हो।

पीपाड़ शहर के सार्वजनिक श्मशान स्थल पर महासतीवर्या के पार्थिव देह को

सांसारिक भतीजे श्रीमान माणकचन्द जी कर्नावट, स्थानीय रत्नसंघ अध्यक्ष, संघ के पूर्व अध्यक्ष, संघ के कार्याध्यक्ष, संघ के महामंत्री, स्थानीय संघमंत्री एवं श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ पीपाड़ के अध्यक्ष ने मुखाग्नि दी। पार्थिव देह के दाह संस्कार पश्चात् अधिकांश भाई-बहिनों ने स्थानक पहुँचकर महासती मण्डल के दर्शन-वन्दन कर मांगलिक श्रवण की। अन्तिम यात्रा की व्यवस्था में श्री जैन रत्न युवक संघ के सदस्यों के साथ सकल जैन समाज के उत्साही युवकों ने व्यवस्था बनाए रखने में पूरी सजगता रखी।

शान्तस्वभावी तपस्विनी महासती श्री शान्तिकंवर जी म.सा.

संक्षिप्त जीवन-परिचय

बचपन का नाम-	सुआ देवी जी कर्नावट
माता का नाम-	श्रीमती भंवरीबाई जी कर्नावट
पिता का नाम-	श्री सिरेमल जी कर्नावट
जन्म स्थान एवं तिथि-	अरटिया कलां, कार्तिक कृष्णा ११, संवत् १९८४
पति का नाम-	श्री भँवरलाल जी कांकरिया, भोपालगढ़
दीक्षा-	वैधव्य पश्चात्, मार्गशीर्ष शुक्ला १०, संवत् २००९
दीक्षा-स्थल-	पाली मारवाड़
दीक्षा-प्रदाता-	आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.
गुरुणी-	महासती श्री हरकंवर जी म.सा.
स्वर्गवास-	चैत्र कृष्णा सप्तमी, विक्रम संवत् २०६४, पीपाड़सिटी, २९ मार्च, २००८, प्रातः ५ बजे पश्चात्
विशेषताएँ-	स्वाध्याय-रसिक, शान्तिप्रिय, सेवाभावी, तपस्विनी, संयम की निर्दोष परिपालना।

30 मार्च को एक साथ तीन प्रसंग

आदिनाथ प्रभु का जन्म-कल्याणक, आचार्यप्रवर हीरा का जन्म-दिवस तथा दिवंगत महासतीवर्या का गुणानुवाद

यह एक संयोग ही रहा कि चैत्र कृष्णा अष्टमी, ३० मार्च २००८ का पावन-दिवस आदिनाथ प्रभु के जन्म-कल्याणक एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के जन्म-दिवस के साथ शान्त-स्वभावी तपस्विनी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा. को श्रद्धाभिव्यक्ति एवं गुणानुवाद से भी जुड़ गया। तीन-तीन प्रसंग एक साथ होने से प्रवचन-सभाओं में सर्वत्र अच्छी उपस्थिती रही। अष्टमी तो थी ही, अतः तप-

त्याग, उपवास-पौषध एवं दया-संवर की सोत्साह साधना भी हुई। गुणानुवाद सभाओं में तीर्थंकर आदिनाथ के उपकारों का स्मरण किया गया, पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचंन्द्र जी म.सा. के संयमी-जीवन के शतायु होने की कामना की गई तथा दिवंगत महासतीवर्या के तपोमय संयमनिष्ठ शान्तस्वभावयुक्त साधना का स्मरण कर प्रेरणाप्रद वाणी का प्रसार हुआ।

घाटकोपर (पूर्व) मुम्बई के हींगवाला स्थानक में परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के पावन सान्निध्य में आयोजित प्रवचन सभा में **तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा** ने शान्तस्वभावी महासती श्री शान्तिकंवर जी म.सा. के साधनामय जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा कि इच्छा रहते हुए प्राण समाप्त हो जाय इसका नाम है मृत्यु और प्राण रहते इच्छा समाप्त हो जाय इसका नाम है मुक्ति। यदि मनुष्य में से इच्छा निकाल दें तो वह भगवान् है। जीवन को उन्होंने कामना के निवारण के साथ शान्ति की दिशा की ओर बढ़ाया। वे शान्ति की दिशा में एक सफल कदम रख गई। ५५ वर्षों तक शान्तिकंवर जी म.सा. ने शान्ति के साथ शान्त जीवन में शुद्ध संयम पालकर शान्ति नाम को सार्थक किया। उनके जाने से रिक्तता हुई। 'कहं न कुज्जा सामण्णं, जो कामे न निवारए' के हार्द को उन्होंने हृदयंगम कर लिया था।

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर के जन्म-दिवस एवं आदिनाथ जन्म-कल्याणक पर विचार व्यक्त करते हुए मुनिश्री ने कहा- आत्मा ही महात्मा और परमात्मा पद को प्राप्त करता है। आज हम अवसर्पिणी काल के प्रथम परमात्मा का जन्म कल्याणक और वर्तमान संघनायक महात्मा का जन्म-दिवस मना रहे हैं। १३ मार्च १९३९ को पीपाड़ में जन्मे आचार्यप्रवर ७०वें बसन्त में प्रवेश कर रहे हैं। गुरु चरणों में रहकर विनय से आपने जीवन का निर्माण किया ''संजोगा विप्पमुकस्स अणगारस्स भिखुणो'' आगम वाक्य का आप अपने जीवन में पूर्णतया पालन कर रहे हैं। आप प्रारम्भ से ही दुःखकारी जड़ के प्रभाव से बचते रहे एवं संयमी जीवन में गुणों के अभिमान के पोषण से बचने हेतु सजग रहते हैं।

तत्त्वचिन्तक मुनिश्री ने आदिनाथ प्रभु के गुणों का गान 'आदेश्वर स्वामी हो-प्रणमूँ सिरनामी तुम भणी'' से प्रारम्भ किया एवं कहा कि जो पूर्णतः निर्दोष होता है वह परमात्मा होता है। निर्दोषता के लिए जो सजग होता है वह महात्मा होता है। आचार्यप्रवर महात्मा हैं एवं दिवंगत महासती भी महात्मा थीं।

स्थानीय संघमंत्री **श्री मनसुखभाई जी कोठारी** ने अपने संक्षिप्त सम्बोधन में परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा, लीमड़ी सम्प्रदाय एवं गोंडन सम्प्रदाय की महासती मण्डल के श्रीचरणों में वन्दन कर कहा कि घाटकोपर संघ

का सौभाग्य है कि हमें सभी सम्प्रदायों में सौहार्द की भावना रखने वाले आचार्यप्रवर प्रभृति संत-सतीवृन्द के पावन सान्निध्य में तीन प्रसंग एक साथ मनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आज यहाँ अनेक परम्पराओं के पदाधिकारीगण एवं प्रबुद्ध श्रावक-श्राविकाएँ उपस्थित हैं, मैं संघ की ओर से सभी का स्वागत करता हूँ।

महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. ने उद्‌बोधन में कहा कि यथानाम तथागुण को धारण करने वाले महासती जी का कर्नावट कुल में जन्म हुआ। भोपालगढ़ की कांकरिया परिवार की वधू बनना एवं कुछ समय पश्चात् वैधव्य प्राप्त होना शायद नियति थी। रत्नसंघ में आचार्य श्री हस्ती के मुखारविन्द से संयम स्वीकारने के बाद महासती जी ने आज्ञा आराधन में कभी ननु-नच नहीं किया। पिछले चार-पाँच वर्षों से श्वास फूलने और श्वास की आवाज दूर तक सुनाई पड़ने की स्थिति में भी स्वाध्याय, जप-तप और स्मरण में लीन रहने वाली वयोवृद्धा महासती जी की आचार्य श्री के दर्शन करने की भावना थी, किन्तु वह भावना साकार नहीं हो सकी। संयम-साधना में रमण करते हुए सेवा, स्वाध्याय, तप और आचार्य भगवन्त (पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज) का सूत्र- 'खण निकम्मो रहणो नहीं' तपस्विनी महासती जी ने अपने जीवन में चरितार्थ किया। उन्होंने चार मासखमण किए।

रत्नसंघ के संरक्षक **प्रो. चाँदमल जी कर्नावट** ने अपनी श्रद्धांजलि में कहा कि वे मेरी सांसारिक चचेरी बहिन थी। जब १९५० में विधवा हुई तब वे निरक्षर थीं। मेरे से वर्णमाला सीखना प्रारम्भ किया और अभ्यास करते-करते वे पढ़ने में सक्षम हुईं। पुष्कर में पहला मासखमण किया। वे तपस्विनी महासती थी और उन्हें आडम्बर, फिजूलखर्ची व प्रदर्शन पसन्द नहीं था। अप्रमत्त जीवन जीने वाली शान्त स्वभावी महासती जी ने ५५ वर्ष की दीक्षा पर्याय में संयम में सजगता रखी, कभी दोष नहीं लगाया। मैं महासती जी के दर्शन नहीं कर सका, आज अपनी श्रद्धा व्यक्त करता हूँ।

गोंडल सम्प्रदाय की **महासती श्री भक्तिश्री जी म.सा.** ने आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी महाराज के जन्म-दिवस के प्रसंग से "दर्शन पाया, भाग्य सवाया, म्हारी खुशियाँ रो नहीं, पार.....प्यारा गुरुदेवा" बोल में गीत के माध्यम से गुणगान किए।

अजराममर लीमड़ी सम्प्रदाय की **महासती श्री कुमुदप्रभा जी म.सा.** ने महासती श्री शांतिकंवर जी महाराज को श्रद्धांजलि-भावांजलि अर्पित की। पूज्य आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के प्रति मंगलभावना व्यक्त की और कहा.कि आप शतायु हों, जुग-जुग जीयें और शासन को चमकायें।

श्रद्धेय श्री बलभद्रमुनि जी म.सा. ने अपने विचार रखते कहा कि अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे में भगवान् आदिनाथ का जन्म हुआ। भगवान् ने असि-मसि-कृषि का ज्ञान करवाया। वे ८३ लाख पूर्व वर्ष संसार में रहे। भरत को राज्य संभला कर संयम-मार्ग पर आरूढ़ होने वाले वे आदि पुरुष थे। भगवान् का शासन प्रदीप्त करने वाले आचार्यप्रवर का आज ७०वाँ जन्म-दिवस है, ४५वाँ संयम वर्ष चल रहा है। आचार्यप्रवर गुणों के भण्डार हैं, आपश्री ज्ञान-ध्यान-तप और चिन्तन में रमण करते हैं।

श्रद्धेय श्री मनीष मुनि जी म.सा. ने अपने आराध्य गुरुवर्य के विशिष्ट गुणों का बखान करते हुए कहा कि पूज्य गुरुदेव का अधिकांश समय ध्यान, मौन, जप, स्वाध्याय, साधना में ही व्यतीत होता है। 'हस्ती पट्टधर हीरा गुरु का जीवन बड़ा निराला' बोल में भजन के माध्यम से भी मुनिश्री ने गुणगान किए।

श्रद्धेय श्री योगेशमुनि जी म.सा. ने कहा कि तपस्विनी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा. ने 'संजोगा विप्पमुक्कस्स' की उक्ति जीवन में चरितार्थ की। अपने आराध्य गुरुवर्य के जन्म-दिवस के प्रसंग से मुनिश्री ने कहा- पूज्य गुरुदेव कर्म से महान् हैं।

संघाध्यक्ष श्री विनोदभाई मेहता ने अपनी और अपने क्षेत्र की पुण्यवानी बताते हुए कहा कि आचार्यप्रवर प्रभृति संत-सतीवृन्द के पावन सान्निध्य में मारवाड़ी, मेवाड़ी, गुजराती सभी श्री संघों का यहाँ एकत्रित होना और गुणानुवाद सभा में भाग लेना विशेष महत्त्व रखता है। आचार्यप्रवर के वि.सं. २०११ के चातुर्मास की विनति रखते हुए संघाध्यक्ष महोदय ने कहा २०१० तक के चातुर्मास पहले से स्वीकृत हैं, हमें एक चातुर्मास का लाभ अवश्य प्रदान करें।

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने 'संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' का हार्द समझाते हुए फरमाया कि जीवन को सार्थक करने के दो सूत्र हैं- संयम और तप। संयम और तप के द्वारा साधक अपनी आत्मा को भावित करता है। महासती शान्तिकंवर जी ने इन दोनों सूत्रों को जीवन में अपनाया। वे हृदय से सरल थीं। 'धम्मो सुद्धस्स चिट्ठइ' सरलता के बिना शुद्धता नहीं आती और शुद्ध हृदय में ही धर्म ठहरता है। पीपाड़ में 'जहा अन्तो तहा बाहिं' स्वरूप वाली तपस्विनी महासती जी का कल महाप्रयाण हुआ। मनचाही हर व्यक्ति मान लेता है, पर मन के प्रतिकूल संघ की और संघनायक की आज्ञा को सहजता से मान लेना कहने में जितना सरल है, मानना उतना सरल नहीं है। अनुकूलता में हर व्यक्ति रहने को तत्पर है, प्रतिकूलता आने पर कठिनाई का अनुभव होता है। तपस्विनी महासती श्री

शांतिकंवर जी महाराज ने अनुकूल परिस्थितियों में यश-अर्जन किया और प्रतिकूल परिस्थितियों में वे समभावी रहीं। साधक वही है जो प्रतिकूल वातावरण में भी अनुकूलता का सर्जन करे, मर्यादा का रक्षण करे, साथ रहने वालों के जीवन में ज्ञान-चारित्र वर्द्धन में सहयोग करे। मन नहीं मिलने पर कभी-कभी मर्यादा का रक्षण कम हो जाता है, पर आपने अन्य सिंघाड़ों की सतियों को भी स्वीकार कर ज्ञान में वर्धापन किया। ५५ वर्ष तक संयम की आराधना करते हुए पूर्ण शांति के साथ शांतिकंवर जी ने संयम-साधना में सजगता रखी। शास्त्र का अनमोल सूत्र- 'समयं गोयम मा पमायए' महासती जी के जीवन में चरितार्थ होता था। जीवन भर सभी को अच्छा सहयोग करने, अपना बनाने की कला का आदर्श इनसे सीखें। जब भी देखा- स्वाध्याय और सेवा में सजगता देखी।

उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में चौपासनी हाउसिंग बोर्ड (जोधपुर) के लव-कुश प्रांगण में गुणानुवाद सभा में **श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनि जी म.सा.** ने अपने हृदयोद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा कि अशरण को शरण दे वही गुरु है। माता, पिता और गुरु ये तीन स्वभाव से हितकारी हैं। गुरु हमारे परम उपकारी हैं। शिष्य का गुरु के प्रति समर्पण भाव हो तो जीवन-निर्माण होने में देरी नहीं लगती। मुनिश्री ने 'छंदं निरोहेण उवेइ मोक्खं' का हार्द समझाते हुए संघ-नायक के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की तथा कहा कि आचार्यप्रवर की साधना निरन्तर विकसित हो रही है। मुनिश्री ने आचार्यप्रवर के सुदीर्घ संयम-जीवन की मंगलकामना की।

मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. ने पूज्या महासती श्री शांतिकंवर जी महाराज के तप और सेवा के क्षेत्र में कीर्तिमान की चर्चा करते हुए कहा कि जन्मने वाले का मरण निश्चित है, पर जिनका जीवन त्याग में, संयम में निरत होता है उनका मरण सफल है। भोगों में, वासना में, पौद्‌गलिक सुखों में मरण की कोई कीमत नहीं। महासती जी ने दीक्षा पूर्व एवं पश्चात् गुरुणी महासती श्री हरकंवर जी महाराज के पास ज्ञान-आराधना और व्रत-पच्चक्खाण से धीरे-धीरे जीवन आगे बढ़ाया। वे तपस्विनी महासती थी। उन्होंने पुष्कर चातुर्मास में मासखमण किया, धनोप चातुर्मास तक चार मासखमण किए। हर साल उन्होंने अठाई और अठाई से ऊपर तक की तपश्चर्याएँ की। तप के साथ सेवा उनकी विशिष्ट पहचान थी। सेवा, स्वाध्याय और हर आगत को व्रत-नियम करवाने में तपस्विनी महासती जी ने अपने ५५ वर्ष तक के संयम पर्याय में पूरी सजगता रखी। मुनिश्री ने शांतस्वभावी तपस्विनी महासती जी के जीवन पर लिखित पंक्तियाँ पढ़ी जो इस प्रकार हैं-

म–हावीर के शासन की जो थी अद्भुत साधिका।
हा–र कभी मानी नहीं परीषहजयी प्रभाविका।
स–ज्झायम्मि रओ सया जिनका साधना का मन्त्र था।
ती–न आठ किये अनेको पैंतीस तप में भी मनोबल स्वतंत्र था।
श्री–रत्नसंघ की दीप्त मणि तप सेवा की एक मिशाल बनी।
शां–त सौम्य मृदुभाषी और सरलता की पर्याय थी।
ति–न्नाणं और तारयाणं मे जो सबके ही सहाय थी।
कं– खे गुणे जाव सरीरभेए सूत्र को नित साधती।
व–र्धमान परिणाम से आत्मगुण से जो भावती।
र–मणता थी आत्मभाव में जो अप्रमत्तता की सूचना।
जी–वंत प्रेरणा पाते सभी फिर क्या किसी से पूछना।

मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. ने आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के व्यक्तित्व, कृतित्व और विशिष्ट गुणों पर प्रकाश डालते हुए आचार्यप्रवर के नेतृत्व में रत्नसंघ पल्लवित-पुष्पित हो रहा है उस पर प्रमोद व्यक्त किया। मुनिश्री ने आचार्यप्रवर के सुदीर्घ एवं समीचीन स्वास्थ्य की मंगलमनीषा रूप भाव व्यक्त किए।

श्रद्धेय श्री लोकचन्द्र जी म.सा. ने अपने विचार रखते फरमाया कि जल की नन्हीं बूँद को हर ओर से संकट ही संकट है। मिट्टी उसे सोखना चाहती है तो तपती किरणें उसे भाप बना उड़ा ले जाना चाहती हैं। चिड़ी जैसा छोटा पक्षी अपनी चोंच से पानी पीने के लिए अकुलाता है तो हवा भी उसके अस्तित्व को मिटाने के लिए प्रयासरत रहती है। उसे सब जगह से खतरा है। वही बूँद महासमुद्र में समा जाय तो उसे कहीं से कोई खतरा नहीं। मुनिश्री ने अपने अस्तित्व में अभिमान न करने की बात प्रस्तुत करते हुए कहा कि हम आचार्यप्रवर एवं महासती जी के गुणों का गान करने के साथ हीरा के राही बनें।

परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. ने आदि तीर्थंकर आदिनाथ प्रभु के जन्म-कल्याणक पर संक्षिप्त विचार रखते कहा कि सुयोग्य गुरु के सुयोग्य शिष्य आचार्य श्री हीराचन्द्र जी महाराज कथनी-करनी की एकरूपता, चतुर्विध संघ की सार-संभाल और विनय-विवेक जैसे गुणों के कारण शासन की प्रभावना बराबर कर रहे हैं। उपाध्यायप्रवर ने शान्तस्वभावी महासती जी के स्वर्गगमन पर फरमाया कि उनके गुण आज गाये जा रहे हैं, आगे भी उनके गुण अमर रहेंगे। ५५

साल के दीक्षा पर्याय में सति परिवार के साथ निभने-निभाने की उनमें विशेष रूप से कला थी। वे यथानाम तथागुण को चरितार्थ करने वाली साधिका थी इसीलिए तो उन्हें शांति से मरण प्राप्त हुआ।

उपाध्यायप्रवर ने उद्‌बोधन के पश्चात् व्रत प्रत्याख्यान करवाए एवं उपस्थित जन-समुदाय ने चार लोगस्स का ध्यान कर शांत स्वभावी महासती जी को श्रद्धांजलि अर्पित की।

साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. ने शान्तस्वभावी तपस्विनी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा. के विशिष्ट गुणों को जीवन-व्यवहार में चरितार्थ करने की प्रेरणा स्वरूप समाचार पीपाड़ विराजित **व्याख्यात्री महासती श्री इन्दुप्रभा जी म.सा.** को भिजवाये। मदनगंज में **सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा.** के सान्निध्य में, इतवारी-नागपुर (महा.) में **व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा.** के सान्निध्य में गुणगान किए गये। अरसीकेरा में **विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा.**, लल्लूपुर में **विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा.** ने दिवंगत महासती जी के गुण स्मरण-गुण कीर्तन किए। शान्तस्वभावी महासती जी की ज्येष्ठ शिष्या **व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा.** आदि ठाणा के सान्निध्य में नसीराबाद में गुणानुवाद सभा आयोजित की गई।

पीपाड़ में व्याख्यात्री महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा. आदि ठाणा ५ की सन्निधि में राता उपासरे में गुणानुवाद सभा रखी गई, जिसमें रत्नसंघ सहित सकल जैन समाज के श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लिया। रत्नसंघ के अध्यक्ष **श्री हस्तीमल जी बोहरा** ने शान्तस्वभावी तपस्विनी महासती श्री शान्तिकंवर जी की विशेषता बताते हुए कहा कि हर सम्प्रदाय के लोग उन्हें चाहते थे। वर्द्धमान स्थानकवासी संघ के संरक्षक **श्री जवरीमल जी लूंकड़**, रत्नसंघ के वरिष्ठ श्रावकरत्न **श्री भँवरलाल जी चौधरी, विरक्ता बहिन वर्षा सालेचा** ने महासती जी के गुणों का पावन स्मरण किया। महिला मण्डल की श्राविकाओं ने सामूहिक गीत के माध्यम से गुणगान किए। **नवदीक्षिता महासती श्री अंजना जी** ने गुरुणी के उपकारों के प्रति श्रद्धाभिव्यक्ति की। **नवदीक्षिता महासती श्री देवांगना जी म.सा.** ने गुरुणी जी म.सा. की आत्मीयता की भूरि-भूरि सराहना की। **महासती श्री मुदितप्रभा जी म.सा.** ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि जिन घड़ियों की प्रतीक्षा नहीं की जाती वैसा प्रसंग कल अनचाहे विकराल काल के रूप में उपस्थित हुआ और तप-साधिका गुरुणी जी को

अपना ग्रास बना लिया। उपकारी माता-पिता की तरह आत्मीयता, वात्सल्य एवं हितसिंचन करने वाली सद्गुरुणी के बारे में उन्होंने कहा कि वे समता, सरलता और शांति की प्रतिमूर्ति थी। गुरुणी जी महाराज ने रत्नसंघ में अध्यात्मयोगी पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज के मुखारविन्द से दीक्षा अंगीकार कर "जाए सद्धाए णिक्खंतो तामेव अणुपालिया" की उक्ति चरितार्थ करते हुए सेवा और तपस्या में अपने-आपको झोंक दिया। गुरुणी जी ने पैंतीस की तपस्या की, कई मासखमण किए, एक से पच्चीस तक की लड़ी, पर्युषण में अठाई की तपश्चर्या एवं स्वाध्याय की निरन्तरता के कारण उनके चेहरे पर शान्ति की आभा झलकती थी। उन्होंने जीवनकाल में लगभग ६० अठाई तप किए। गुरुणी जी महाराज ने सब्जी में सहज आने वाले धनिये-मिर्च को छोड़कर हरी का त्याग, ड्राइफ्रूट्स का त्याग और बाजार की मिठाई का त्याग रखा। गुरुणी जी महाराज संयम के प्रति जागरूक थी। शारीरिक प्रतिकूलताओं में भी समता, शांति, स्वाध्याय एवं संयम-साधना में सजगता उनके रोम-रोम में समाई हुई थी। आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज ने सरलता के कारण गुरुणी जी महाराज को 'शान्तस्वभावी' के पद से अलंकृत किया तो वर्तमान संघनायक पूज्य श्री हीराचन्द्र जी महाराज ने उनको 'तपस्विनी' पद प्रदान किया। गुरुणी जी महाराज का गुरु के प्रति सर्वतोभावेन समर्पण रहा। वे हम सभी सतियों को गुरु आज्ञा और संघ समाचारी पालन में सावचेत रहने की हितशिक्षा प्रदान करती रहती थी। **व्याख्यात्री महासती श्री इन्दुबाला जी महाराज** ने अपने संक्षिप्त उद्बोधन में कहा कि गुरुणी जी महाराज का जीवन प्रेरणादायी था, हम उनकी हितशिक्षाओं पर चलें तभी हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी। गुणानुवाद सभा में स्वर्गस्थ महासती जी के सांसारिक भ्राता श्री उगमराज जी कर्नावट, चेन्नई से सपरिवार पधारे हुए थे। चार लोगस्स के ध्यान के साथ श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

ब्यावर में **व्याख्यात्री महासती श्री शांतिप्रभा जी म.सा.**, मुण्डरगी में **व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा.**, खण्डाला में **महासती श्री चारित्रलता जी म.सा.**, डहाणु में **व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा.**, चिकमंगलूर में **व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा.**, पूना में **सेवाभावी महासती श्री विमलेश प्रभा जी म.सा.** एवं थांवला में **महासती श्री समर्पिता जी म.सा.** आदि ठाणा के सान्निध्य में आयोजित गुणानुवाद सभाओं में वक्ताओं ने दिवंगत महासती जी के गुणस्मरण-गुण कीर्तन तो किए ही सभी स्थानों पर श्रावक-श्राविकाओं ने चार-चार लोगस्स का ध्यान कर श्रद्धा समर्पित की।

विचरण-विहार एवं संभावित विहार दिशाएँ

१ अप्रेल २००८ की स्थिति

१. परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा ८	घाटकोपर से मुम्बई महानगर के क्षेत्रों को स्पर्श करते हुए ७.५.०८ के दीक्षा महोत्सव पूर्व विले पार्ले (पश्चिम) पधारने की संभावना।
२. परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा ४	चौ. हा. बोर्ड से महावीर जयन्ती के पूर्व नेहरू पार्क पधारने एवं तदनन्तर पाली की ओर विहार की संभावना।
३. साध्वीप्रमुखा-शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. आदि ठाणा १०	वर्द्धमान भवन-पावटा से महावीर जयन्ती पूर्व नेहरू पार्क क्षेत्र पधारने की संभावना। तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा की जयपुर की ओर बढ़ने की भावना।
४. सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा ४	मदनगंज से हरमाड़ा की ओर विहार चल रहा है।
५. व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा ७	नागपुर से हिंगणघाट होकर अमरावती की ओर विहार।
६. विदुषी महासती श्री सुशीला कंवर जी म.सा. आदि ठाणा ७	स्वास्थ्य की अनुकूलता होने पर अरसीकेरे से विहार की संभावना है।
७. विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा ४	आगरा की ओर विहार चल रहा है।
८. व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर म.सा. आदि ठाणा ५	नसीराबाद से ब्यावर की ओर विहार चल रहा है।
९. व्याख्यात्री महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा. आदि ठाणा ५	पीपाड़ के स्वाध्याय भवन से विहार कर शहर के बाहर कटारिया पोल पधारे हैं; जोधपुर की ओर बढ़ने की संभावना है
१०. व्याख्यात्री महासती श्री शांतिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा ३	ब्यावर विराज रहे हैं। ब्यावर से सोजत होते हुए पाली की ओर बढ़ने की संभावना है।

११.व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा ३	मुण्डरगी विराज रहे हैं।
१२.व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलता जी म.सा. आदि ठाणा ३	पूना के आसपास विहार चल रहा है।
१३.व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा ३	डहाणु से मुम्बई की ओर विहार।
१४.व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा ३	चिकमंगलूर के आसपास विचरण की संभावना।
१५.सेवाभावी श्री विमलेशप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा ४	साधना सदन-पूना विराज रहे हैं। पूना से मुम्बई की ओर अग्र विहार की संभावना है।
१६. महासती श्री समर्पिता जी म.सा.आदि ठाणा ३	थांवला से लाडपुरा की ओर विहार चल रहा है।

फाल्गुनी चौमासी पर पनवेल (मुम्बई) एवं जोधपुर सहित विभिन्न क्षेत्रों में धर्मप्रभावना

परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि ठाणा ८ के पावन सान्निध्य में पनवेल में फाल्गुनी चौमासी पर सामायिक-स्वाध्याय, जप-तप, ध्यान-मौन, दया-संवर, उपवास-पौषध एवं व्रत-प्रत्याख्यानों के प्रति आबाल-वृद्ध सबका अच्छा उत्साह रहा। फाल्गुनी चौमासी पर मुम्बई, पूना, बैंगलोर, सूरत, गढ़ सिवाना, बालोतरा, जलगाँव, अमरावती, बागलकोट, बीजापुर आदि क्षेत्रों ने आचार्यप्रवर के श्रीचरणों में विनति रखी। आचार्यप्रवर ने विनति रखने वाले श्री संघों से चैत्र शुक्ला अष्टमी १३.४.०८ को चातुर्मास खोलने की भावना का संकेत किया।

परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा ४ एवं तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा के चौपासनी हाउसिंग बोर्ड विराजने से प्रतिदिन के प्रवचन सामायिक-स्वाध्याय भवन के बजाय लव-कुश गृह के विशाल प्रांगण में सम्पन्न हुए। प्रवचन-सभा में अच्छी उपस्थिति तो रही ही, चौमासी पर व्रत-नियमों के प्रति भी सूर्यनगरी वासियों में अपूर्व उत्साह देखा गया। जयपुर के मानसरोवर क्षेत्र ने तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा की विनति प्रस्तुत की वहीं

आगोलाई श्रीसंघ ने उपाध्यायप्रवर के श्रीचरणों में महावीर जयन्ती पर पधारने की पुरजोर विनति की। महावीर जयन्ती के लिए जोधपुरवासी भी निरन्तर प्रयासरत हैं।

साध्वीप्रमुखा-शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. आदि ठाणा ने फाल्गुनी चौमासी वर्द्धमान भवन-पावटा (जोधपुर) में की। सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा ४ के सान्निध्य में मदनगंज में फाल्गुनी चौमासी पर धर्मध्यान अच्छा रहा। तपस्विनी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा. आदि ठाणा ६ के सान्निध्य में पीपाड़ में फाल्गुनी चौमासी पर सामायिक-प्रतिक्रमण के कार्यक्रम में पीपाड़वासियों का अच्छा उत्साह रहा। नागपुर, अरसीकेरा, नवीगंज (उ.प्र.), विजयनगर, गुलाबपुरा, गदग, वापी, मुण्डीकेरे, पूना आदि स्थानों पर जहाँ रत्नसंघीय महासती मण्डल विराजित थे, प्रवचन, प्रतिक्रमण एवं प्रायश्चित्त में जन-जन का अच्छा जुड़ाव रहा।

अक्षय तृतीया विले पार्ले(पश्चिम)मुम्बई और पाली में

परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में ७ मई २००८ को कतिपय दीक्षाओं के पश्चात् ८ मई २००८ को तप और दान के विशिष्ट पर्व अक्षय तृतीया पर तप-साधक आचार्यप्रवर प्रभृति संत-सतीवृन्द के मुखारविन्द से तप और दान का माहात्म्य श्रवण करेंगे एवं नवीन प्रत्याख्यान भी लेंगे। श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मुम्बई के तत्त्वावधान में आयोजित तप पूर्णाहुति समारोह एवं दीक्षा समारोह में सम्मिलित होने वाले भाई-बहन अपने आगमन की अग्रिम सूचना **२५ अप्रेल २००८** के पूर्व निम्नांकित सम्पर्क सूत्र पर अवश्य देवें।

स्थान – ऋतम्भरा कॉलेज, विले पार्ले (पश्चिम) जे.वी.पी.डी. बस स्टेण्ड के पास, मुम्बई।

सम्पर्क सूत्र-(१) श्री पारसमल जी हीरावत, फोन ०२२-२३६३०३२०/ ४०१८५०००, मोबाइल- ०९८२१०-१३५३० (२) श्री नरेन्द्र जी हीरावत, फोन-०२२-२४३८०७१३, मोबाइल ०९८२१०-४०८९९

जो तप-साधक एवं नवीन व्रत-नियम ग्रहण करने वाले आरक्षण एवं स्थान की दूरी की वजह से मुम्बई नहीं पहुँच सकते हैं, वे **परम श्रद्धेय उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा.** प्रभृति संत-सतीवृन्द की सेवा में पाली पहुँच कर तप और दान का माहात्म्य श्रवण कर सकेंगे। परम श्रद्धेय उपाध्याय प्रवर ने जोधपुर से पाली की ओर विहार का संकेत फरमा दिया है और अक्षय तृतीया पर पाली विराजने की संभावना है। अक्षय तृतीया पर सम्मिलित होने वाले भाई-बहन अपने आगमन की अग्रिम सूचना निम्नांकित सम्पर्क सूत्र पर अवश्य देवें।

पाली स्थल– सामायिक-स्वाध्याय भवन, सुराना मार्केट

सम्पर्क सूत्र–श्री ताराचन्द जी सिंघवी 'मंत्री', श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ,सुराना मार्केट, पाली मारवाड-३०६४०१ (राज.), फोन-०२९३२-२५००२१

'पच्चीस बोल' प्रतियोगिता की अन्तिम तिथि बढ़ी

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत 'पच्चीस बोल वर्ष' मनाने के उपलक्ष्य में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा 'पच्चीस बोल' प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। उक्त प्रतियोगिता में उत्तरपुस्तिका जमा कराने की अंतिम तिथि ३० मार्च से बढ़ाकर ८ मई २००८ कर दी गयी है। प्रश्नपुस्तिका निम्नांकित पते पर भिजवावें- *अ.भ. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर, फोन-०२९१-२६३६७६३।*

कहानी/संस्मरण प्रतियोगिता परिणाम

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल के तत्त्वावधान में आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के ९८ वें जन्म-दिवस पर आयोजित कहानी संस्मरण प्रतियोगिता का परिणाम इस प्रकार रहा-**प्रथम पुरस्कार**-रु.११००/- श्रीमती बीना जी जैन, अलीगढ़ (उ.प्र.), **द्वितीय पुरस्कार**-रु. ५००/- श्री कस्तूरचन्द जी जैन, खेरलीगंज, **तृतीय पुरस्कार**-रु. २५०/- श्रीमती सिद्धिजी बाफना, जोधपुर, श्री अनिलकुमार जी जैन, कोटा।

-डॉ. मंजुला बम्ब, अध्यक्ष

निबन्ध प्रतियोगिता का परिणाम

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के ४५वें दीक्षा-दिवस के उपलक्ष्य में **'सदाचार की प्रथम सीढ़ी निर्व्यसनता'** विषय पर राष्ट्रीय निबन्ध प्रतियोगिता आयोजित की गई थी। इस प्रतियोगिता में ३९ महानुभावों ने भाग लिया। प्रतियोगिता का परिणाम इस प्रकार है- **प्रथम पुरस्कार–** श्री जयवन्त पी. शाह, पीपलोद-सूरत, **द्वितीय पुरस्कार**- श्रीमती बीना जैन, अलीगढ़ (उ.प्र.), **तृतीय पुरस्कार–** श्री पवन कुमार जैन, ब्यावर। **सान्त्वना पुरस्कार**- श्री लक्ष्मीचन्द जी छाजेड़-समदड़ी, श्री अनिल कुमार जी जैन-कोटा, श्री पारसमल जी चण्डालिया-ब्यावर, डॉ. लक्ष्मीचन्द जी जैन-छोटी कसरावद, सुश्री अल्फा सुराना-जोधपुर, श्री उदयलाल जी डांगी-बड़ी सादड़ी, श्री पीयूष जी जारोली-बालोतरा, सौ. राखी अमर जैन-मुक्ताई नगर, श्री बुद्धिप्रकाश जी जैन-भैंसोदामण्डी एवं श्री अभिनव सालेचा-बालोतरा। *-धर्मेश चौपड़ा, संयोजक*

स्वाध्याय संघ शाखा चेन्नई का क्षेत्रों में दौरा

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर की शाखा चेन्नई के विभिन्न पदाधिकारियों द्वारा तमिलनाडू क्षेत्र के विभिन्न क्षेत्रों में ८ दिन का दौरा किया गया। उक्त कार्यक्रम में श्रीमान सूरजमल जी भण्डारी, श्री सुधीर जी सुराणा, श्री दुलीचन्द जी बोहरा ने अपनी सेवाएँ प्रदान की। साथ ही श्री मदनलाल जी वैद, श्री हस्तीमल जी बोहरा, श्री प्रकाशचन्द जी ओस्तवाल, श्री सुमेरचन्द जी बाघमार ने भी अपनी अल्पकालीन सेवाएँ प्रदान की। प्रवास कार्यक्रम के दौरान विभिन्न क्षेत्रों में सामायिक-स्वाध्याय की प्रेरणा, संघ की गतिविधियों की जानकारी के साथ ही पर्युषण में स्वाध्यायी बुलाने हेतु मांगे भी प्राप्त की गई।

छात्रावास अधीक्षक की आवश्यकता

श्री कुशल जैन छात्रावास, धर्मनारायण जी का हत्था, पावटा, जोधपुर के लिए एक अधीक्षक की आवश्यकता है। जैन धर्म के जानकार और अनुभवी व्यक्ति को प्राथमिकता दी जायेगी। इच्छुक व्यक्ति निम्न पते पर ३० अप्रेल २००८ तक अपना आवेदन करें एवं व्यक्तिगत रूप से मिलें। *-भागचन्द कांकरिया, कांकरिया बिल्डिंग, जालोरी गेट, जोधपुर, फोन नं. ०२९१-२४३७०६३, २४३५८७९*

जयपुर में उच्च शिक्षा हेतु प्रवेश का स्वर्णिम अवसर

राजस्थान तथा अन्य क्षेत्रों से १०वीं, १२वीं बोर्ड की परीक्षा में ६० प्रतिशत अंकों से उत्तीर्ण छात्रों को निःशुल्क प्रवेश देकर उन्हें उच्च स्तरीय जैन विद्वान् तैयार किए जाने की योजना है। जो छात्र इच्छुक हों वे जिनवाणी 'मार्च २००८' का अंक देखकर १५ मई २००८ तक आवेदन करें। **सम्पर्क सूत्र-** *श्रीमती प्रेमलता जैन, अधिष्ठाता- श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, ए-९, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर (राज.), फोन-०१४१-२७१०९४६*

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय

पर्युषण में कत्लखाने बन्द रहेंगे

सर्वोच्च न्यायालय की खण्डपीठ के माननीय न्यायाधिपति श्री एच.के. सक्सेना एवं माननीय न्यायाधिपति श्री मार्कण्डेय काट्जू ने १४ मार्च २००८ को ऐतिहासिक निर्णय में गुजरात उच्च न्यायालय का निर्णय बदलते हुए कहा कि अहमदाबाद में जैन धर्मावलम्बियों की धार्मिक भावना का आदर करते हुए पर्युषण के दौरान ९ दिन तक कत्लखाने (Slaughter houses) बन्द रखे जाने चाहिए। सम्राट् अकबर का हवाला देते हुए कहा गया कि अन्य धर्मावलम्बियों की भावना के आदर में

उन्होंने शिकार एवं माँस-सेवन का निश्चित अवधि के लिए त्याग कर दिया था। भारत जैसे बहु सांस्कृतिक देश में अन्य धर्म की भावनाओं का आदर करना चाहिए। सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय हिंसा विरोधक संघ की याचिका पर अपील (सिविल) सं. ५४६९ सन् २००५ पर दिया। *-ऋषभ संचेती, एडवोकेट, जोधपुर*

संक्षिप्त समाचार

जलगाँव- परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर १००८ पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. का ९८ वाँ जन्म-दिवस समारोह तपस्वीराज श्री कानमुनि जी, उपप्रवर्तक श्री गुलाबमुनि जी म.सा. आदि ठाणा ९ तथा महासती श्री सुशीला कंवर जी म.सा. आदि ठाणा ६ के पावन सान्निध्य में तप-त्याग पूर्ण वातावरण में मनाया गया। अनेक उपवास, एकाशन, आयम्बिल, पौषध एवं तीन सामायिक के तेले हुए। अनेक वक्ताओं ने आचार्यश्री के जीवन के विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला। उपप्रवर्तक श्री गुलाबमुनि जी ने आचार्यश्री के संयमी जीवन में कृत कर्मक्षय के पुरुषार्थ को विविध उदाहरणों से स्पष्ट किया। तपस्वीराज कानमुनिजी ने आचार्यश्री के सान्निध्य में बिताये समय के चन्द प्रसंग प्रस्तुत किये। *-रतनलाल सी. बाफना, जलगांव*

जोधपुर- श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर द्वारा दिनांक १८ मई से ८ जून २००८ तक जोधपुर के विभिन्न स्थानों पर नैतिक एवं धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया जाएगा। *सम्पर्कसूत्र- शेखर सुराणा, ९८२९१५४१२९*

मुम्बई- आचार्य श्री नानेश हॉस्टल की स्थापना के पश्चात् पहले वर्ष में १५० छात्र लाभान्वित हुए हैं। ५० कमरों वाले छात्रावास में एम.बी.ए., इंजिनीयरिंग, सी.ए., मेडिकल और कम्प्यूटर विज्ञान के छात्र आवास एवं शाकाहारी शुद्ध खान-पान की व्यवस्था से उच्च अध्ययन कर रहे हैं। निर्धन छात्रों की सहायतार्थ मीना रांका फाउण्डेशन, मुम्बई द्वारा १० छात्रों को ५० प्रतिशत आवास शुल्क प्रतिवर्ष छात्रवृत्ति के रूप में दिया जा रहा है। छात्रावास में योग्यता एवं उपलब्धता के आधार पर प्रवेश दिया जाता है। *-हीरालाल शर्मा, सलाहकार*

दिल्ली- जैन महासभा, दिल्ली ने दिन में विवाह समारोह आयोजित करने वाले परिवारों को प्रोत्साहित करने के लक्ष्य से नव-दम्पतियों एवं उनके परिवारजनों का अभिनन्दन किया। महावीर वाटिका में आयोजित जैन महासम्मेलन में दिल्ली की प्रमुख जैन संस्थाओं के हजारों प्रतिनिधि उपस्थित थे। समारोह में मुख्य अतिथि राज्यसभा के सदस्य श्री जयप्रकाश जी अग्रवाल ने दिन में आडम्बर विहीन विवाह अभियान की सराहना की। *-प्रो. रतन जैन*

चैन्नई- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, चैन्नई के तत्त्वावधान में २५ मार्च २००८ को

स्वाध्याय भवन में चारित्र-मार्ग में चरण बढ़ाने वाली मुमुक्षु सुश्री डिम्पल सालेचा का स्वागत-अभिनन्दन किया गया। श्रीमती रूपल व शशि कांकरिया द्वारा मंगलाचरण के अनन्तर श्री पी.एम. चोरड़िया, श्रीमती मधु जी सुराना,श्री दुलीचन्द जी बोहरा, श्री मंगलचन्द जी भंसाली, श्री चंपालाल जी बोथरा, श्री सुमेरचन्द जी बाघमार, श्री गौतमराज जी सुराना, श्री पी.एस.सुराना आदि श्रावक-श्राविकाओं ने मुमुक्षु बहिन का गद्य-पद्य भाषा-भाव में स्वागत किया। श्रीमती ललिता जी भंडारी ने माल्यार्पण से , वरिष्ठ श्राविका श्रीमती पारसबाई जी भंडारी ने शाल ओढ़ाकर एवं श्री गौतमराज जी सुराना ने संघ की ओर से खोल भरकर मुमुक्षु बहिन का अभिनन्दन किया। मुमुक्षु बहिन सुश्री डिम्पल ने कहा कि यह स्वागत मेरा नहीं बल्कि संयम का है। बहिन ने माता-पिता एवं गुरुवर्य के उपकारों का स्मरण करते हुए ७ मई २००८ को मुम्बई में दीक्षा महोत्सव पर पधारने का अनुरोध किया। कार्यक्रम का संचालन संघमंत्री श्री जवाहरलाल जी कर्नावट ने किया।

मुम्बई- नेशनल जैन डॉक्टर फेडरेशन (मुम्बई) के तत्त्वावधान में अन्तर्राष्ट्रीय जैन डॉक्टर्स कान्फ्रेन्स का आयोजन षण्मुखानन्द हॉल, मुम्बई में किया गया, जिसमें देश-विदेश के करीब १८०० डाक्टरों ने भाग लिया। सम्मेलन में युवा आहार-विहार, आवेश, हृदय रोग-कारण व निवारण, अहिंसक चिकित्सा में जैन धर्म की भूमिका विषय पर डाक्टरों ने अपने विचार रखे। जैन संत-सतियों के उपचार के लिए करीब ५३ करोड़ की राशि से 'श्रमण आरोग्यम्' नामक फण्ड बनाया गया। युवा संस्कार प्रोजेक्ट के माध्यम से जैन डाक्टरों द्वारा जैन संस्कृति व संस्कार के करीब दस हजार युवाओं को जोड़ने का लक्ष्य है। दृष्टिविहीन लोगों के लिए ब्रेल लिपि में प्रतिक्रमण व भक्तामर स्तोत्र की रचना की गई। सम्मेलन में अहिंसा, दया, रस-परित्याग, तप, कायाक्लेश, स्वाध्याय, ध्यान आदि से जोड़ने की प्रेरणा की गई। सम्मेलन में डॉ. बी. रमेश जैन ने सामायिक-ध्यान पर विचार रखे। ऑल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइन्स नई दिल्ली के डॉ. प्रसन्नराज जी सिंघवी ने अपना शोधपत्र प्रस्तुत किया। अगले वर्ष अहमदाबाद में कॉन्फ्रेंस आयोजित करने की डॉ. सुधीर शाह ने घोषणा की।

-बी. रमेश जैन

हिण्डौन सिटी- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के तत्त्वावधान में मुमुक्षु सुश्री रितू जैन सुपुत्री सुश्रावक श्री राजेन्द्रकुमार जी जैन, बड़ौदाकान अलवर का १ अप्रेल को बहुमान किया गया, जिसमें समाज के अनेक लोगों ने भाग लिया। स्मरण रहे विरक्ता बहिन की मुम्बई में ७ मई को परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के मुखारविन्द से दीक्षा होने जा रही है। हिण्डौन संघ ने आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के

७०वें जन्म-दिवस पर त्याग-तप का आदर्श रखा एवं तपस्विनी महासती श्री शान्तिकंवर जी म.सा. के गुणानुवाद किए। -*धर्मचन्द जैन, मंत्री*

बधाई/चुनाव

सुकेणा(नाशिक)- श्री केतन ललित गाँधी ने बी.जे. मेडिकल कॉलेज, पूना से एम.बी.बी.एस. में ७२ प्रतिशत अंक अर्जित कर छात्र वर्ग में प्रथम स्थान प्राप्त किया है। आप श्री दगडूलाल जी गाँधी के पौत्र एवं रत्नसंघ के श्रावक हैं।

जोधपुर- सुश्री स्निग्धा सदावत सुपुत्री श्रीमती रेणुका जी एवं श्री सुरेन्द्र जी सदावत

सुपौत्री श्रीमती सुकनकंवर जी एवं श्री अमरचन्द जी सदावत (उपाध्यक्ष, श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर) ने एम.बी.बी.एस. परीक्षा में वरीयता सूची में तृतीय स्थान प्राप्त किया।

चित्तौड़गढ़- रत्नसंघीय सुश्री कोमल जैन सुपुत्री श्री हेमन्त कुमार जी जैन (माननीय न्यायाधीश अपर जिला एवं सेशन फास्ट ट्रेक कोर्ट, चित्तौड़गढ़) ने राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय गांधीनगर में आयोजित मूट कोर्ट कोम्पीटिशन में विश्वविद्यालय में दूसरा स्थान प्राप्त किया तदनन्तर राष्ट्रीय मूट कोर्ट कोम्पीटिशन बैंगलोर में भाग लिया। आपके नाना श्री पी.सी. सिंघवी अतिरिक्त संभागीय आयुक्त जोधपुर के पद से सेवानिवृत्त हैं एवं चाचा श्री महेन्द्र जी पारख वरिष्ठ आर.ए.एस. अधिकारी हैं।

मैसूर- सुश्री सरला हिंगड़ सुपुत्री श्री सुन्दरलाल जी हिंगड़ ने मैसूर विश्वविद्यालय की स्नातकोत्तर द्वि-वर्षीय एम.ए. जैन दर्शन एवं प्राकृत परीक्षा, वर्ष २००८ में स्वर्णपदक प्राप्त किया। यह पदक उन्हें विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में प्रदान किया गया।

श्रवणबेलगोला(कर्नाटक)- स्वस्ति श्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामी जी के सान्निध्य में श्रुतकेवली एजुकेशन ट्रस्ट के निर्णयानुसार जर्मनी के प्रसिद्ध वयोवृद्ध जैन विद्यामनीषी प्रो. (डॉ.) विलियम बोली (वर्ज वर्ग) को २००५ का एवं प्रो. डॉ. क्लास ब्रूहन (बर्लिन) को २००६ का ज्ञानभारती प्राकृत अन्तर्राष्ट्रीय अवार्ड प्रदान करने की २७ फरवरी को घोषणा की गई। -*धरणेन्द्र डी. जैन शास्त्री, मैनेजिंग ट्रस्टी*

श्रद्धाञ्जलि

जयपुर- श्रद्धानिष्ठ-धर्मनिष्ठ-कर्त्तव्यनिष्ठ सेवाभावी सुश्राविका श्रीमती शकुन्तला जी धर्मपत्नी संघ-सेवी श्रावक रत्न श्री प्रकाशचन्द जी हीरावत का २३ मार्च २००८ को स्वर्गवास हो गया। हीरावत परिवार रत्नसंघ का समर्पित परिवार है। परिवार की गुरु-भक्ति, संघनिष्ठा और धर्म-साधना में प्रगाढ़ रुचि है। श्राविका रत्न की संघ सेवा,

संत सेवा स्वधर्मी वात्सल्य सेवा अनुकरणीय थी। लालभवन में धर्म साधना में अग्रणी रहने वाली श्राविका के जीवन में सरलता, सहजता और सहिष्णुता का संगम था। वे अपने पीछे भरा-पूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गई हैं। संघ के पूर्व अध्यक्ष एवं शासन सेवा समिति के सदस्य श्री कैलाशचन्द जी हीरावत ने सपरिवार उपाध्यायप्रवर प्रभृति संतवृन्द एवं साध्वीप्रमुखा प्रभृति सती-मण्डल के दर्शन-वन्दन कर मांगलिक श्रवण की और परिजनों ने शोक-निवारण का आदर्श उपस्थित किया।

जयपुर- अनन्य गुरुभक्त, दृढ़धर्मी उदारमना सेवाभावी सुश्रावक श्री हरीशचन्द्र जी बडेर

सुपुत्र संघसेवी सुश्रावक स्व. श्री पूनमचन्द जी बडेर का ५ मार्च, २००८ को आकस्मिक स्वर्गवास हो गया। वे रत्नसंघ के समर्पित श्रावक थे। उनकी गुरुभक्ति, संघनिष्ठा और स्वधर्मी वात्सल्य सेवा अनुपम थी। अपने पूज्य पिताश्री के पदचिह्नों पर चलते हुए उन्होंने भूधर कुशल रत्नबन्धु कल्याण कोष के माध्यम से स्वधर्मी वात्सल्य सेवा का काम जीवन के अन्त तक संभाला। जयपुर के प्रतिष्ठित अमर जैन हॉस्पिटल के अध्यक्ष पद पर रहते हुए आपने एक फ्री वार्ड की सेवा उपलब्ध करवाई, उसे सेवा का अनुपम आदर्श कहा जा सकता है। व्यावसायिक प्रामाणिकता के साथ पारिवारिक-परिजनों एवं संघ समाज के प्रति उत्तरदायित्व निर्वहन में उन्होंने सदा सजगता रखी। अपनी धर्म सहायिका के देहावसान के अनन्तर वे प्रायः आत्मचिन्तन में अधिक सक्रिय हो गये थे, परिणामस्वरूप जीवन के अन्त तक व्रत- प्रत्याख्यानों की बात उनके मुंह से निकलती रही। वे अपने पीछे भरापूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गये हैं।

पाली- श्रद्धानिष्ठ-धर्मनिष्ठ-कर्त्तव्यनिष्ठ, उदारमना, सेवाभावी सुश्रावक श्री

सोहनलाल जी नाहर के ९ मार्च, २००८ को सूरत में आकस्मिक स्वर्ग-गमन से घर-परिवार एवं संघ-समाज में सुयोग्य श्रावकरत्न की अपूरणीय क्षति हुई है। वे संघ सेवी-संत सेवी श्रावक थे। श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, पाली के अध्यक्ष के रूप में उनके कार्यकाल में सामायिक-स्वाध्याय भवन, श्री कुशल जैन छात्रावास, श्रीमती शरदचन्द्रिका मोफतराज मुणोत अतिथि भवन, भोजनशाला जैसी उपलब्धियाँ रही। संघ को सक्रिय, सक्षम एवं स्वावलम्बी बनाने में उनका योगदान आने वाली पीढ़ी को प्रेरणा देता रहेगा। आचार्य भगवन्त पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म.सा. के वि.स. २०४७ के चातुर्मास से उनकी धर्मरुचि बनी जो उत्तरोत्तर वृद्धिगत होती रही। उनकी गुरुभक्ति, संघनिष्ठा और कर्त्तव्य के प्रति सजगता अनुकरणीय थी। वे विगत कुछ वर्षो से अस्वस्थ चल रहे थे, किन्तु औषधोपचार के प्रति सजगता के कारण सुराना मार्केट

स्थानक में दो-दो, तीन-तीन घंटे बैठकर संघहित के विषयों पर विचार-चर्चा करने में उन्हें सन्तोष की अनुभूति होती थी। वे स्वयं सामायिक-प्रतिक्रमण करते और अपने परिवारजनों को धर्म-साधना में सक्रिय रहने की प्रेरणा करते। सबके साथ स्नेह-सौहार्द के कारण उनका घर-परिवार में, संघ-समाज में और अपने-परायों में अच्छा वर्चस्व था। वे अपने पीछे धर्म सहायिका सहित भरा-पूरा संस्कारित और धर्मनिष्ठ परिवार छोड़कर गये हैं। उनके सुपुत्र श्री सुनील जी, निहाल जी एवं शांतिलाल जी भी संघ-सेवा में समर्पित हैं। पाली से सेठानी जी ने अपने पूरे परिजनों के साथ उपाध्यायप्रवर प्रभृति संतवृन्द एवं साध्वीप्रमुखा आदि सतीवृन्द के दर्शन कर शोक निवारण का आदर्श उपस्थित किया।

जोधपुर- श्रद्धानिष्ठ-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती चंचलजी सुराना धर्मपत्नी सुश्रावक

श्री गौतमराज जी सुराना का ६३ वर्ष की आयु में १५ मार्च, २००८ को असामयिक देहावसान हो गया। गुरु हीरा- गुरु मान के प्रति आस्थावान श्राविका के जीवन में सरलता, मृदुता एवं सहिष्णुता थी। वे गुरु दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण और संत्सग-सेवा में सदा सक्रिय रहीं। नित्य प्रति सामायिक करने वाली श्राविका ने आठ और आठ से ऊपर तक की तपश्चर्याएँ की। सुश्रावक श्री गौतमजी सुराना ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर में सेवाएं प्रदान की।

मुम्बई- दृढ़ श्रद्धाशील सेवाभावी सुश्राविका श्रीमती पारसदेवी जी भण्डारी धर्मपत्नी

स्व. सुश्रावक श्री नेमीचन्द जी भंडारी (पीपाड़ शहर वालों का) ८४ वर्ष की आयु में २५ फरवरी २००८ को स्वर्गवास हो गया। वे रत्नसंघ की समर्पित श्राविका थीं। उनकी गुरुभक्ति, संघनिष्ठा और धर्म के प्रति लगाव प्रेरणादायी था। माता श्री के संस्कारों के कारण सुश्राविका के पाँचों पुत्र धर्मनिष्ठ श्रावक हैं। सुश्रावक श्री रतनराज जी भंडारी ने व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा के भायन्दर चातुर्मास में समर्पित भाव से सेवाएँ दी। आप महाराष्ट्र के क्षेत्रीय प्रधान का दायित्व बखूबी निभा रहे हैं। सरलता, सादगी, उदारता की प्रतिमूर्ति श्राविका अपने पीछे भरा-पूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गई हैं।

चैन्नई-संघ सेवी सुश्राविका श्रीमती धापी देवी जी कोठारी धर्मपत्नी सुश्रावक श्री पारसमल जी खींवसरा कोठारी (रणसी गांव)का ७० वर्ष की आयु में ६ मार्च, २००८ को स्वर्गवास हो गया। वे रत्नसंघ की सुज्ञ श्राविका थीं। उनकी गुरुभक्ति, संघनिष्ठा और संघसेवा में उदारता प्रेरणादायी थी। सामायिक-प्रतिक्रमण, दया-संवर,

उपवास-पौषध और तप-साधना में उनकी अच्छी रुचि थी। चातुर्मास में कोठारी दम्पती गुरुसेवा में रहकर धर्म-ध्यान करने में सदा तत्पर रहते थे। वे अपने पीछे भरा पूरा संस्कारित परिवार छोड़ गई हैं।

जयपुर- दृढ़धर्मी सुश्राविका श्रीमती मोहनकंवर जी नवलखा का ११ मार्च २००८ को देहावसान हो गया। गुरु हीरा-गुरु मान के प्रति आस्थावान श्राविकारत्न की धर्म साधना के प्रति अच्छी रुचि थी। उनके जीवन में सरलता, मृदुता, उदारता का संगम था।

जोधपुर- संघसेवी सुश्राविका श्रीमती कमला देवी जी कोठारी (छोटा बाईसा)

धर्मपत्नी स्व. श्री माणकचन्द जी कोठारी का ८० वर्ष की आयु में १६ मार्च, २००८ को सामायिक साधना में स्वर्गगमन हो गया। वे रत्नसंघ की सुज्ञ श्राविका थीं। सामायिक-स्वाध्याय और त्याग-तप में उनकी विशेष रुचि थी। दिन में अधिकतर समय वे सामायिक साधना में व्यतीत करती। विगत करीब एक दशक से नियमित आयंबिल ओली की आराधना करने वाली श्राविका ने अठाई और अठाई से ऊपर तक की कई तपश्चर्याएँ कीं।

ब्यावर- रत्नसंघ के सुज्ञ श्रावकरत्न श्री नेमीचन्द जी बुरड़ का पाँच दिवसीय संथारे के

साथ १७ मार्च, २००८ को समाधिमरण हो गया। गुरु हीरा-गुरु मान के प्रति अटूट आस्थावान श्रावक ने पूरी जागरूकता के साथ संथारा अंगीकृत किया। पारिवारिक-परिजनों ने अन्तिम मनोरथ पूर्ति में प्रशंसनीय सहयोग प्रदान किया। वहीं संथारालीन श्रावकरत्न को जयमलगच्छीय व्याख्यानी सन्त श्री सुमतिमुनि जी म.सा., रत्नसंघीय शासन सेवा समिति के सदस्य श्री हस्तीमल जी गोलेच्छा एवं बुरड़ परिवार की धर्मनिष्ठ श्राविका श्रीमती प्रेमकंवर जी बुरड़ ने अपने देवर के आत्मलीन बने रहने में अनुकरणीय सहयोग दिया। बुरड़ परिवार ने पीपलिया बाजार स्थानक में १९ मार्च को गुणानुवाद सभा के पश्चात् श्री गुणवन्तमुनि जी म.सा. के मुखारविन्द से मांगलिक श्रवण कर सांसारिक रीति-रिवाजों का त्याग कर दिया। स्वर्गस्थ श्रावकरत्न के अग्रज श्री मिलापचन्द जी बुरड़, सुपुत्र श्री संजय जी संघ के सक्रिय श्रावक हैं।

विजयवाड़ा- बारनी मूल की दृढ़धर्मी सेवाभावी सुश्राविका श्रीमती कंवल जी बाईसा

धर्मपत्नी स्व. श्री शैतानचन्द जी चतुर मेहता का ९४ वर्ष की आयु में १३ मार्च, २००८ को स्वर्गवास हो गया। वे रत्नसंघ की सुज्ञ एवं तपस्वी श्राविका थी। उन्होंने तीन वर्षीतप, दस अठाईयां एवं उपवास-बेले-तेले-पांच की अनेकानेक तपश्चर्याएँ की।

सामायिक-साधना में उन्हें विशेष आनन्द प्राप्त होता था। जीवन के अंत में लकवे की बीमारी में भी उनका समत्वभाव प्रशंसनीय था। स्मरण-भजन में लीन श्राविकारत्न ने जय गुरु हस्ती-जय गुरु हीरा-जय गुरु मान का जप करते-करते नश्वर देह का त्याग किया। सरलता, उदारता और सेवाभावना से श्राविकारत्न ने संघ में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई। आपके पुत्र श्री प्रकाशचन्द जी मेहता संघ-सेवा में अग्रणी हैं। आपकी पुत्री श्रीमती कमला जी ने स्वाध्यायी के रूप में सेवा दी। वे अपने पीछे भरा-पूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गई हैं।

गढ़सिवाना- श्रद्धानिष्ठ धर्मनिष्ठ सेवाभावी सुश्राविका श्रीमती सुआदेवी जी धर्मपत्नी संघसेवी उदारमना सुश्रावक स्व. श्री रिखबचन्द जी बागरेचा(जिनाणी) का २८ मार्च, २००८ को आकस्मिक स्वर्गवास हो गया। परम श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. के वि.सं. २०६२ के बालोतरा चातुर्मास में जिनाणी दम्पती ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण, सत्संग सेवा का लाभ लिया और अपने पैतृक नगर गढ़सिवाना फरसने की भावपूर्ण विनति रखी। जब उपाध्यायप्रवर ग्रामानुग्राम ज्ञान गंगा प्रवाहित करते शेषकाल में सिवाना पधारे तो जिनाणी परिवार ने सेवा-भक्ति का अच्छा आदर्श उपस्थित किया। उपाध्यायप्रवर के चातुर्मास की भावना के कारण जिन्नाणी दम्पती ने सिवाना श्री संघ में बात की, संघ की विनति में जिनाणी परिवार की प्रमुखता रही, किन्तु सेठ साहब का असमय देहावसान हो जाने के बाद सुश्राविका जी की भावना में कोई कमी नहीं आई। वे धर्मनिष्ठ श्राविका थी। सामायिक-प्रतिक्रमण और साधना-आराधना में सजग श्राविका के जीवन में स्वधर्मी वात्सल्य सेवा और जीवदया के प्रति उदारता का भाव प्रेरणादायी था।

जयपुर- सुश्रावक श्री राजकुमार जी हीरावत सुपुत्र श्री नवरतनमल जी हीरावत का २ अप्रेल २००८ को आकस्मिक स्वर्गवास हो गया। उनका जीवन सरल, सहीं एवं सादगीपूर्ण था। वे सेवाभावी श्रावक थे। उनमें विनम्रता, मृदुता एवं वात्सल्य की भावना थी।

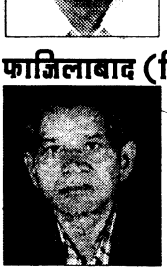

फाजिलाबाद (हिण्डौन)- सुश्रावक श्री कल्याणसहाय जी जैन का ७१ वर्ष की आयु में १८ फरवरी २००८ को स्वर्गवास हो गया। गुरु हीरा-गुरु मान के प्रति अनन्य आस्थावान श्रावकरत्न का धार्मिक ज्ञान अच्छा था। प्रतिदिन सामायिक करने वाले श्रावकरत्न के सुपुत्र श्री विरेन्द्र जी, महेन्द्र जी, अजयकुमार जी, विजयकुमार भी धर्मनिष्ठ श्रावक हैं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

५००/- रुपये जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

१११७८ श्रीमती लीलावती जी जांगड़ा, धामणगांव रेलवे (महा.)
१११७९ श्री सुमेरमल जी चौपड़ा, इन्दौर (म.प्र.)
१११८० श्रीमती दिव्यांगना जी जैन (नाहर), इन्दौर (म.प्र.)
१११८१ श्री महावीर जी जैन, जोधपुर (राज.)
१११८२ Shri Anil Ji Jain, Muhwa, Dist. Shajapur (M.P.)
१११८३ श्री मनीष कुमार जी कोठारी, पारसोली, चित्तौड़गढ़ (राज.)
१११८४ श्री वरूण जी जैन, जोधपुर (राज.)
१११८५ श्री नवरतन आर. चौपड़ा, सूरत (गुजरात)
१११८६ श्री अनिल जी खींचा, ब्यावर (राज.)
१११८७ श्री राजेश जी लोढ़ा, जयपुर(राज.)
१११८८ सुश्री दीपा जी सेठिया, इन्दौर (म.प्र.)
१११८९ श्री सुशील कुमार जी जैन, छिप्परी, कन्नौज (उ.प्र.)
१११९० श्री मुकेश कुमार जी चोरडिया, नवसारी (गुजरात)
१११९१ श्री धनराज जी चोरडिया, वरोरा, चन्द्रपुर (महा.)
१११९२ श्री गौतमचन्द जी रांका, अजमेर (राज.)
१११९३ श्री किशनरूपचन्द जी चौधरी, जोधपुर (राज.)
१११९४ श्री अनिल जी जैन, बुरहानपुर (म.प्र.)
१११९५ श्री महावीरचन्द जी गोलेछा, वाकोद, जामनेर (महा.)
१११९६ श्री रमेशचन्द जी छाजेड़, वाकोद, जामनेर (महा.)
१११९७ सौ. कल्पना जी गाँधी, लोनावला, पूना (महा.)
१११९८ श्री अमोल कुमार जी नाहर, लोनावला, पूना (महा.)
१११९९ श्री कन्हैयालाल जी भूरट, लोनावला, पूना (महा.)
११२४२ Shri Vijay Raj Ji Singhvi, Hyderabad (A.P.)
११२४३ Shri Sunil Ji Kothari, Hyderabad (A.P.)
११२४४ Shri Ganpat Raj Ji Bothra, Hyderabad (A.P.)
११२४५ Prof. Prem Suman ji Jain, Shravanabelagola (Karnataka)
११२४६ Shri Rajesh Ji Punmia, Mumbai (M.H.)
११२५३ Shri Dhanesh Ji Mutha, T. Nagar, Chennai (T.N.)

श्री आर. पदमचन्द जी बाघमार, चेन्नई के सौजन्य से आजीवन सदस्य

११२०० श्री हरीचन्द्र हुडेजा ट्रस्ट धर्मार्थ चिकित्सालय, कानपुर (उ.प्र.)
११२०१ कल्पना जी अग्निहोत्री, कानपुर (उ.प्र.)
११२०२ श्री राजेन्द्र कुमार जी जैन, कानपुर (उ.प्र.)

११२०३ श्री अभय कुमार जी मेहता, कानपुर (उ.प्र.)
११२०४ श्री विपिन भाई जी बोरा, कानपुर (उ.प्र.)
११२०५ श्री दीपक कुमार जी जैन, कानपुर (उ.प्र.)
११२०६ श्री राजेन्द्र कुमार जी जैन, आगरा (उ.प्र.)
११२०७ श्री रामबाबू जी, मन्धना, कानपुर (उ.प्र.)
११२०८ श्री विरेन्द्र कुमार जी जैन, जयपुर (राज.)
११२०९ सौ. कुमुद जी एस. लुंकड़, पुणे (महा.)
११२१० साधना जी जैन, नवी मुम्बई (महा.)
११२११ Smt. Mamta Ji Jain, Kachiguada, Hyderabad (A.P.)
११२१२ Shri Shantilal Ji Kothari, Secunderabad (A.P.)
११२१३ Shri Shyam Bihari Ji Dixit, Manthana, Kanpur (U.P.)
११२१४ Shri Dinesh Chand Ji Pathak, Tatiaganj, Kanpur (U.P.)
११२१५ Shri Laxmi Chand Ji Gupta, Pipari Road, Kanpur (U.P.)
११२१६ श्री महावीर जी लुंकड़, जोधपुर (राज.)
११२१७ श्री महेन्द्र कुमार जी छाजेड़, गढ सिवाना, बाड़मेर (राज.)
११२१८ श्रीमती सुनीता जी छाजेड़, वापी (गुजरात)
११२१९ Shri Ashok Ji Jain, Balgaon (Karnataka)
११२२० Shri Arjun Ji Jain, Balgaon (Karnataka)
११२२१ Shri Rakhab Chand Ji Baktawar, Rampura, Neemach (M.P.)
११२२२ Shri Suraj Mal Ji Sisodia, Bhawani Mandi (Raj.)
११२२३ Shri Hukum Chand Ji Sacklecha, Agra (U.P.)
११२२४ श्री कांतीलाल जी दुगड, वेल्हाणा, धुलिया (महा.)
११२२५ श्री प्रकाशचन्द जी दुगड, वेल्हाणा, धुलिया (महा.)
११२२६ श्री सुभाष जी बाफना, वेल्हाणा, धुलिया (महा.)
११२२७ श्री एम. बी. कांकरिया, राजगुरु नगर, पूना (महा.)
११२२८ डॉ. जीवन एस. कटारिया, कलमसरा, पाचोरा (महा.)
११२२९ सौ. शकुन्तला बाई जी, मुक्ताई नगर, जलगाँव (महा.)
११२३० श्री डी. के. ब्रह्मेचा, मेहूनबारा, चालीसगाँव, जलगाँव (महा.)
११२३१ श्री पारसमल जी दुगड, मोहाडी, धुलिया (महा.)
११२३२ सौ. कां. कौशल्या जी बाफना, जबल देवपुर, धुलिया (महा.)
११२३३ सौ. कां. शोभा जी जैन, धुलिया (महा.)
११२३४ श्री विजय जी जैन, टावेर, धुलिया (महा.)
११२३५ श्री आनन्द जी जैन, धुलिया (महा.)
११२३६ श्री हरकचन्द जी नाहटा, जोधपुर (राज.)
११२३७ श्री नरेन्द्र कुमार जी भंसाली, जोधपुर (राज.)
११२३८ श्री रोविल जी जैन, अहमदाबाद (गुजरात)

११२३९ श्री शान्तिलाल जी जैन, भरतपुर (राज.)
११२४० श्री दीपक जी जैन, मौहल्ला गोपालगढ, भरतपुर (राज.)
११२४१ श्री जसेन्द्र जी जैन, मौहल्ला गोपालगढ, भरतपुर (राज.)
११२४७ सौ. कां. सुशीला जी रूणवाल, पूना (महा.)
११२४८ श्रीमती सुशीला जी लोढ़ा, सांगानेर, जयपुर (राज.)
११२४९ श्री भागचन्द जी जैन, जयपुर (राज.)
११२५० Shri Reeta Ji Jain, Kolkatta (W.B.)
११२५१ श्रीमती साधना जी जैन, वाशी, नवी मुम्बई (महा.)
११२५२ श्री सुभाषचन्द जी आंचलिया, शोरापुर, गुलबर्गा (कर्नाटक)

जिनवाणी हेतु साभार

७१००/- श्री सुनीलकुमार जी, निहालचन्द जी, शांतिलाल जी नाहर, पाली-मारवाड़, संघसेवी श्रावकरत्न श्री सोहनलाल जी नाहर के ९ मार्च २००८ को आकस्मिक स्वर्गगमन की स्मृति में उनकी धर्मसहायिका श्रीमती विजयकंवर जी, तीनों सुपुत्रों तथा सुपौत्र रवि व राहुल नाहर, पाली-सूरत की ओर से सप्रेम भेंट।

५१०१/- श्री रतनराज जी, गौतमचन्द जी, प्रकाशचन्द जी, अशोक जी व अनेश जी भण्डारी, मुम्बई अपनी पूज्य माताजी श्रीमती पारसदेवी जी धर्मपत्नी स्व. श्री नेमीचन्द जी भण्डारी का स्वर्गवास दि. २५.१२.०८ को होने पर उनकी पावन स्मृति में।

२०००/- श्री प्रकाशचन्द जी चतुर मेहता, विजयवाड़ा, स्व. माताजी श्रीमती कवलकंवर जी मेहता धर्मपत्नी स्व. श्री शैतानचन्द जी मेहता की पावन स्मृति में।

११०१/- श्रीमती भंवरीबाई-स्व. श्री बिसनचन्द जी छाजेड़ (कोसाणा वाले), हैदराबाद, अपनी सुपौत्री एवं श्रीमती सविताबाई-श्री मिलापचन्द जी छाजेड़ की सुपुत्री सौ. कां. माया का शुभ विवाह अहमदनगर निवासी श्री दगडुलाल जी देसरडा के सुपौत्र एवं श्रीमती उर्मिलाबाई-श्री मदनलाल जी देसरडा के सुपुत्र चि. सागर जी के संग दि. ९.३.०८ को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

११०१/- श्रीमती भंवरीबाई-स्व. श्री बिसनचन्द जी छाजेड़ (कोसाणा वाले), हैदराबाद, अपनी सुपौत्री एवं श्रीमती सविताबाई-श्री मिलापचन्द जी छाजेड़ की सुपुत्री सौ. कां. छाया का शुभ विवाह नासिक निवासी श्री सूरजमल जी सांखला के सुपौत्र एवं श्रीमती सुरेखा बाई-श्री सुभाषचन्द जी सांखला के सुपुत्र चि. स्वप्निल जी के संग दि. १०.३.०८ को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

११००/- श्री बाबूलाल जी, दीपेश कुमार जी जैन 'उज्ज्वल', मुम्बई, अपनी सुपुत्री सौ. कां. कामिनी जी जैन का शुभ विवाह चि. मनीष जी सुपुत्र श्री धनेश कुमार जी गुप्ता 'पोरवाल' -कोटा के संग दि. २२.०२.०८ को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

११००/- श्रीमती रतन जी कर्णावट एवं समस्त परिवारजन, जयपुर, स्व. श्री मोतीचन्द जी कर्णावट की पुण्य स्मृति दि. १३.०३.२००८ के उपलक्ष्य में।

११००/- श्री खेमचन्द जी नवरतनमल जी कांकरिया, चेन्नई, चि. वीरेन्द्र कुमार जी के संग सौ. कां. दीपशिखा जी के शुभविवाह के उपलक्ष्य में।

११००/- श्रीमती सरोजनी देवी जी जैन, रायकोट-पंजाब, श्री अमरचन्द जी जैन का दि. २६.१२.०७ को स्वर्गवास होने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

१००१/- श्रीमती शांति जी, श्री विजेन्द्र जी जैन, फाजिलाबाद-हिण्डौन सिटी, श्री कल्याणसहाय जी जैन का स्वर्गवास १८.२.०८ को हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

१०००/- श्री शांतिलाल जी, सुरेश कुमार जी गुन्देचा, हैदराबाद, सुपुत्र श्री मुकेश जी गुन्देचा की सुपुत्री के जन्म के उपलक्ष्य में।

५०१/- श्रीमती शशिकान्ता जी धर्मपत्नी स्व. श्री मूलचन्द जी जैन, भरतपुर, अपने सुपुत्र श्री शिवकुमार जी जैन का शुभ-विवाह दि. १.३.२००८ को सौ. कां. सरिता के संग सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

५०१/- श्रीमती मानकंवर जी सिंघवी धर्मपत्नी श्री किस्तूरचन्द जी सिंघवी, जोधपुर, अपने सुपौत्र एवं श्रीमती मधु-राजेन्द्र जी सिंघवी के सुपुत्र श्री मोहित जी सिंघवी के आई.आई.एम. इन्दौर से एम.बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में।

५००/- श्री मगनचन्द जी जैन, फाजिलाबाद-हिण्डौन सिटी, करौली, अपने अग्रज भ्राता की पुण्यस्मृति में।

५००/- श्री राजमल जी, गौतमचन्द जी ओस्तवाल (भोपालगढ़ वाले), बैंगलोर, चि. मनीष जी ओस्तवाल (सी.ए.) का शुभ-विवाह २० फरवरी २००८ को सौ. कां. सुरभि जी खिंवसरा (एम.बी.ए.) के साथ जोधपुर में सम्पन्न होने की खुशी में।

५००/- श्री भीकमचन्द जी, डॉ. रमेश जी जैन, बैंगलोर, सौ. कां. दीपशिखा संग चि. वीरेन्द्र कुमार जी के शुभ-विवाह के उपलक्ष्य में।

५००/- श्री मोहनलाल जी, राजकुमार जी श्रीश्रीमाल, बैंगलोर, सौ. कां. खुशबू सुपुत्री श्रीमती आशा जी-गौतमचन्द जी श्रीश्रीमाल (ब्यावर वाले) का शुभ विवाह चि. पदमराज जी सुपुत्र श्रीमती मंजू-श्री उत्तमचन्द जी नागसेठिया, बैंगलोर के साथ दि. २८.२.०८ को सुसम्पन्न होने पर भेंट।

५००/- श्री महावीरचन्द जी छाजेड़, चेन्नई, अपने सुपौत्र के जन्मोत्सव एवं श्री रविकुमार जी छाजेड़ के सुपुत्र के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में।

५००/- श्री इन्दरचन्द जी सिंघवी, जोधपुर, अपने सुपुत्र श्री जितेन्द्र संग रंजना का शुभ-विवाह दि. १३.३.०८ को सम्पन्न होने की खुशी में।

५००/- श्रीमती रेणुका जी श्री सुरेन्द्र जी सदावत मेहता, जोधपुर, अपनी सुपुत्री सुश्री स्निग्धा मेहता (सुपौत्री श्रीमती सुकनकंवर जी एवं श्री अमरचन्द जी सदावत) द्वारा एम.बी.बी.एस. की परीक्षा तृतीय वरीयता से उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में भेंट।

५००/- श्री नवलकिशोर जी जैन पुत्र श्री उच्छबराय जी जैन, अलीगढ़ हाल निवासी नवसारी (गुजरात), अपनी सुपुत्री सौ. कां. वर्षा जैन का शुभ विवाह दि. १६.२.२००८ को चि. विरेन कुमार सुपुत्र श्री बसन्तलाल जी मालाणी के संग सम्पन्न होने की खुशी में।

५००/- श्री सुन्दरलाल जी हिंगड़, मैसूर, अपनी सुपुत्री सरला जी हिंगड़ के मैसूर विश्वविद्यालय की स्नातकोत्तर द्वि-वर्षीय एम.ए. जैन दर्शन एवं प्राकृत परीक्षा में वर्ष

२००८ के दीक्षान्त समारोह में स्वर्णपदक प्रात करने की खुशी में।

जीव दया हेतु साभार

२२२२/- श्रीमती उमरावमल जी सुराणा एवं श्रीमती ललिता जी सुराणा, जोधपुर, पूज्य पिताजी श्री सुजानमल जी सुराणा एवं माताश्री श्री सुकनकंवर जी सुराणा की पावन स्मृति में जीवदया हेतु।

११००/- श्री जवाहरलाल जी प्रेमचन्द जी बाघमार (कोसाणा वाले), कानपुर, सौ. कां. प्रियंका प्रपौत्री स्व. श्रीमती जतनीदेवी-स्व. श्री सोनराज जी, सुपौत्री श्रीमती शांतिकंवर जी-श्री जवाहरलाल जी, सुपुत्री श्रीमती शशि जी-श्री प्रेमचन्द जी बाघमार का शुभ विवाह दि. ११.२.२००८ को चि. प्रवेश जी, नागपुर के संग इन्दौर में सम्पन्न होने की खुशी में।

११००/- श्री पारसमल जी मगराज जी बोहरा, मण्डली, जिला-बाडमेर, जीवदया हेतु।

५०१/- श्री विजेन्द्र कुमार जी, महेन्द्र कुमार जी, अजय कुमार जी एवं विजय कुमार जी जैन-फाजिलाबाद-हिण्डौन सिटी, अपने पूज्य पिता जी श्री कल्याणसहाय जी जैन का दि. १८.२.०८ को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

५०१/- श्रीमती मानकंवर जी सिंघवी धर्मपत्नी श्री किस्तूरचन्द जी सिंघवी, जोधपुर, अपने सुपौत्र एवं श्रीमती मधु-राजेन्द्र जी सिंघवी के सुपुत्र श्री मोहित जी सिंघवी के आई.आई.एम. इन्दौर से एम.बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में।

५००/- शाह अमीचन्द जी पारसमल जी, जवेरीलाल जी, नरपतराज जी, सुरेशकुमार जी बाघमार, बालोतरा, श्री दौलतराज जी पुत्र श्री चिमनीराम जी बाघमार का आकस्मिक निधन दि.३.२.०८ को होने पर उनकी पावन स्मृति में जीवदया हेतु।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल को प्राप्त साभार

११०००/- स्वाध्याय समिति, मद्रास की ओर से विशिष्ट स्वाध्यायी सम्मान हेतु भेंट।

५५००/- श्री ज्ञानचन्द जी जैन, हुबली द्वारा २५ बोल (मूल) पुस्तक के पुनः मुद्रण हेतु अर्थ सहयोग।

अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जयपुर शाखा को साभार

११०००/- श्री केवलमल जी लोढ़ा, जयपुर, सुपौत्र चि. विवेक (सुपुत्र श्रीमती पूर्णिमा जी-श्री विनोद जी लोढ़ा) के शुभ-विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

११००/- श्री हेमचन्द जी जामड़, जयपुर, आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म.सा. के ९८वें जन्म-दिवस के उपलक्ष्य में भेंट।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को प्राप्त साभार

१००००/- श्री कल्याणमल प्रकाशमल चोरडिया ट्रस्ट, चेन्नई, श्री कमल जी चोरडिया को स्तम्भ सदस्यता हेतु।

५०००/- कल्याणमल चंचलमल चोरडिया ट्रस्ट, जोधपुर, श्री अशोक जी चोरडिया, जोधपुर को संरक्षक सदस्य बनाने हेतु।

५०००/- श्री प्रकाशचन्द जी चतुर मेहता, विजयवाड़ा, स्व. माताजी श्रीमती कवलकंवर जी

मेहता धर्मपत्नी स्व. श्री शैतानचन्द जी मेहता की पावन स्मृति में।

३०००/- श्रीमती रतनकंवर चंचलमल चोरडिया चेरिटेबल ट्रस्ट, जोधपुर, साहित्य अनुदान हेतु।

२१००/- श्री एस. एस. जैन संघ, पाड़ी, पर्युषण सहायतार्थ।

१२००/- श्री जौहरीमल जी छाजेड़, जोधपुर।

११००/- श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन संघ, सुलुरपेठ, पर्युषण सहायतार्थ।

५००/- श्री ज्ञानराज जी अब्बानी सेवा ट्रस्ट, जोधपुर।

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित)

दानदाता एवं दान एकत्रित करने वालों की सूची

५००००/- श्रीमती विमलेश जी सुराणा, भुवनेश्वर, श्री पानमल जी सुराणा की स्मृति में।

२४०००/- श्री आनन्द जी चौपड़ा, गंगानगर

१२०००/- श्रीमती मंजू जी जैन, जयपुर

१२०००/- श्री प्रसन्नमल जी जैन, जयपुर

१२०००/- श्रीमती विजयाबाई जवरीलाल जी मेहता, होसपेट

१२०००/- श्री मोहनलाल जी कैलाशचन्द जी देसरला, हैदराबाद

१२०००/- श्री रिखबचन्द जी कांकरिया चेरिटेबल ट्रस्ट, चेन्नई

१२०००/- श्री विमलेश जी सुराणा, भुवनेश्वर

छात्रवृत्ति योजना में इच्छुक दानदाता एक छात्रवृत्ति १२०००/- रु. के गुणक में जितनी छात्रवृत्तियाँ देना चाहें तदनुसार दानराशि 'गजेन्द्र निधि आचार्य श्री हस्ती स्कॉलर शिप फण्ड' योजना के नाम चैक या ड्राफ्ट से निम्नांकित पते पर भेजने का कष्ट करें- *श्री अशोक जी कवाड़, ३३, Montieth Road, Egmore, Chennai-600008 (Mob. 9381041097)*

आगामी पर्व

चैत्र शुक्ला १३	शुक्रवार, १८.०४.२००८	भ. महावीर स्वामी जन्म कल्याणक।
चैत्र शुक्ला १४	शनिवार, १९.०४.२००८	चतुर्दशी, पक्खी।
चैत्र शुक्ला १५	रविवार, २०.०४.२००८	आयंबिल ओली समाप्त।
वैशाख कृष्णा ८	मंगलवार, २९.०४.२००८	अष्टमी।
वैशाख कृष्णा १४	रविवार, ०४.०५.२००८	चतुर्दशी, पक्खी।
वैशाख शुक्ला ३	गुरुवार, ०८.०५.२००८	अक्षय तृतीया। आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. ७८वाँ आचार्य पद दिवस।
वैशाख शुक्ला ८	सोमवार, १२.०५.२००८	अष्टमी। आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. की १७वीं पुण्य तिथि।

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

कर्म निर्जरा का प्रबल साधन।
स्वास्थ्य वर्धक है पानी धोवन॥

With Best Compliments From :

SURANA
INDUSTRIES LIMITED

Manufacturers & Exporters of

Symbolises the Aspiration of Discerning Steel Buyers !

Premium Quality Steels, viz.,
HSD/CTD Bars, MS Rounds
Structurals Like Flats, Channels
Angles and Squares

Always Use SURANA STEELS to
Highlight your House/Industry

Regd. Cum Corporate Head Office
29, Whites Road, II Floor Royapettah, Chennai-600 014
Grams : **GURUHASTI**
Phone : 28525127 (3 Lines) Fax : 044 28521143
E-mail : suranast@vsnl.com
Website : www.suranaind.com

Works

F-67, 68 & 69 SIPCOT Industrial Complex
Gummidipoondi 601 201, Tiruvallur Dist. Tamilnadu
Ph.: 954119 222881 Telefax : 954119222880

Sales Yard

30, G.N.T. Road, Madhavaram, Chennai 600 110
Ph.: 25375531/32/33 Fax : 044 25375400

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का॥

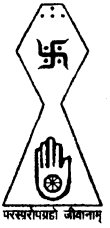

With Best Compliments From :

पारसमल सुरेशचन्द कोठारी

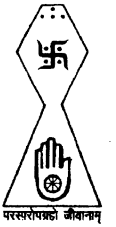

प्रतिष्ठान

KOTHARI FINANCERS

27, Chandrappan Street
Chennai-600079 (T.N.) • Ph.# 42738436, 25298130

Branches :

Bhagawan Motors
Chennai-53, Ph.# 26251960

❖❖❖

Bhagawan Cars
Chennai-53, Ph.# 26243455/66

❖❖❖

Balaji Motors
Chennai-50, Ph.#26247077

❖❖❖

Padmavati Motors
Jafar Kan Peth, Chennai, Ph.#24854526

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये,
कर्म कटाये,
फिर क्यों न अपनायें
– धोवन पानी

Curtesy :
Prithvi Exchange
A DIVISION OF PRITHVI SOFTECH LIMITED
33, Montiesth Road, Egmore, Chennai-600008
Phone : 044-28553185, 42145478, 09381041097

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

A GLASS OF WATER WILL MAKE YOUR KARMA QUARTER

- धोवन पानी -

GURU HASTI GOLD PALACE

(Govt. Authorised Jewellers) (916. KDM)

22 Ct. Gold ! 24 Ct. Trust !

&

P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD

No. 4, 5 Car Street, Poonamallee, CHENNAI-600056

Hello-Hello

044-26272609, 55666555, 26272906, 55689588

अनछाना पानी-BAD।BAD॥

बिक्लरी पानी-OK।OK॥

छाना हुआ पानी-GOOD।GOOD॥

धोवन पानी-BEST।BEST॥

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

सहजता में धर्म का आधार।
धोवन पानी प्रथम आचार॥

Narendra Hirawat & Co.

Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-30034282, 23669818
Mobile : 098210-40899

रत्नसंघ की विभिन्न संस्थाओं के प्रमुख पदाधिकारी

१.	**संयोजक-संरक्षक मण्डल**	022-30645000/23648004
	श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई	09820072724
२.	**संयोजक-शासन सेवा समिति**	
	श्रीमान् रतनलाल सी. बाफना, जलगाँव	0257-2225903/09823076551
३.	**गजेन्द्र निधि/गजेन्द्र फाउण्डेशन**	
	अध्यक्ष-श्रीमान् नवरतन जी कोठारी, मुम्बई	022-23673939/23698880
४.	**अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर**	**0291-2636763**
	अध्यक्ष-श्रीमान् सुमेरसिंह जी.बोथरा, जयपुर	0141-2620571 09414048830/09314048830
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् ज्ञानेन्द्र जी बाफना, जोधपुर	0291-2434355/09414093147
	महामंत्री-श्रीमान् नवरतन जी डागा, जोधपुर	0291-2654427/09828032215
५.	**सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर**	**0141-2575997, 2570753**
	अध्यक्ष-श्रीमान् पी. शिखरमल जी सुराणा, चेन्नई	044-25380387/25391597 09884430000
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् नवरतन जी भंसाली, बैंगलोर	080-22265957/09844158943
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् आनन्द जी चौपड़ा, जयपुर	0141-3233318/09414090931
	मंत्री- श्रीमान् प्रेमचन्द जी जैन, जयपुर	0141-2212982/09413453774
६.	**अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जोधपुर**	**0291-2636763**
	अध्यक्ष-श्रीमती (डॉ.) मंजुला जी बम्ब, जयपुर	0141-3292229/09314292229
	कार्याध्यक्ष-श्रीमती मधु जी सुराणा, चेन्नई	044-25293001/42765646
	मंत्री-श्रीमती आशा जी गांग, जोधपुर	0291-2544124
७.	**अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर**	**0291-2641445**
	अध्यक्ष-श्रीमान् कुशल जी गोटेवाला, सवाईमाधोपुर	07462-233550/09414315098
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् प्रमोद जी हीरावत, जयपुर	0141-2742665/09314507303
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् बुधमल जी बोहरा, चेन्नई	044-26425093/09444235065
	महासचिव-श्रीमान् महेन्द्र जी सुराणा, जोधपुर	0291-2546501/09414921164
८.	**श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर**	**0291-2624891**
	संयोजक-श्रीमान् चंचलमल जी चोरडिया, जोधपुर	0291-2621454/09414134606
	सचिव-श्रीमती मोहनकौर जी जैन, जोधपुर	0291-3296033/09351590014
९.	**अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर**	**0291-2630490**
	संयोजक-श्रीमती सुशीला जी बोहरा, जोधपुर	0291-5108799/09414133879
	सचिव-श्रीमान् राजेश जी कर्णावट, जोधपुर	0291-2549925/09414128925
१०.	**अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर**	**0291-2622623**
	संयोजक-श्रीमती विमला जी मेहता, जोधपुर	0291-2435637/09351421637
	सचिव-श्रीमान् सुभाष जी हुण्डीवाल, जोधपुर	0291-2555230/09460551096

JAI GURU HASTI JAI GURU HEERA JAI GURU MAAN

NO PAIN - ONLY GAIN - पियें धोवन पानी

With best compliments from :

SOHANLAL UMEDRAJ SURENDER HUNDIWAL

S.UMEDRAJ JAIN (HUNDIWAL)

098407 18382

2027 'H' BLOCK 4th STREET,12TH MAIN ROAD,
ANNA NAGAR, CHENNAI-600040
044-32550532

BRANCHES

APPOLO BRIGHT STEELS PVT LTD.
S.P.59, 3 rd MAINROAD
AMBATTUR ESTATE CHENNAI-600058
044-26258734, 9840716053, 98407 16056
FAX: 044-26257269
E-MAIL: appolobright@yahoo.com

APPOLO CORRUGATORS PVT LTD.
NO.400 NORTH PHASE, SIDCO INDUSTRIAL ESTATE,
AMBATTUR CHENNAI-60098
FAX: 044-26253903, 9840716054
E-MAIL:appolocorrugators@yahoo.com

SAPNA PACKAGING INDUSTRIES
NO.410 NORTH PHASE INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR, CHENNAI-600098
044-26241041

PENINSULAR PACKAGINGS
NO.25 SIDCO INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR CHENNAI-600098
044-26250564

आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-018/2006-08
वर्ष : 65 ★ अंक : 4 ★ मूल्य : 10 रु.
15 अप्रेल, 2008 ★ चैत्र सं. 2065

धोवन पानी - निर्दोष जिन्दगानी

Stop existing.
Start Living.

Kalpataru brings you residences that embody the essence of lifestyle living. A space you will be proud to call home.

KALPATARU AURA
L.B.S. Road, **Ghatkopar (W)**

KALPATARU ESTATE
On Jogeshwari-Vikhroli Link Road,
Andheri (E)

KAMDHENU
At Hari Om Nagar, **Mulund (E)**

SIDDHACHAL
Pokhran Road No.2, **Thane (W)**

KALPA-TARU®
101, Kalpataru Synergy, Opposite Grand Hyatt, Santacruz (E), Mumbai 400 055
Tel: 3064 3065, Fax: 3064 3131. E-mail: sales@kalpataru.com. Visit: www.kalpataru.com

Properties professionally managed by
PROPERTY SOLUTIONS (I) PVT. LTD.
www.propertysolutions.co.in

स्वामी-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिये मुद्रक संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशक प्रेमचन्द जैन, बापू बाजार, जयपुर से प्रकाशित। सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।